चन्दामामा

माँ–बच्चों का मासिक पत्र

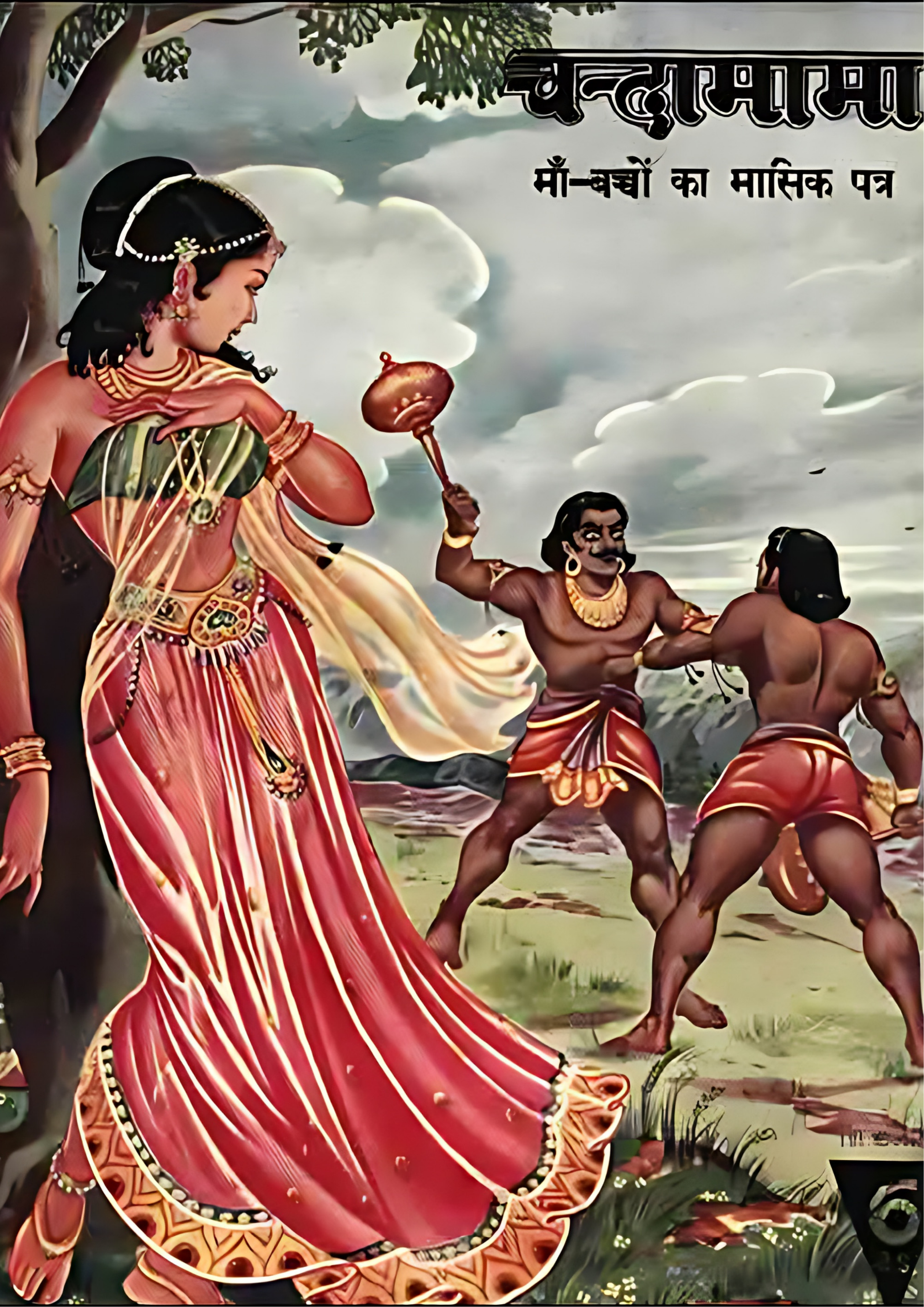

नापसन्द न्याय

किसी गाँव में मोतीलाल नाम का किसान रहा करता था। उसकी पत्नी गङ्गा चुडैल थी। उसको इस बात का बहुत गर्व था कि भगवान ने उसे बहुत कुछ दे रखा था।

एक दिन मोतीलाल और गङ्गा दूसरे किसी गाँव में अपने सम्बन्धियों को देख कर पैदल बापिस आ रहे थे। अन्धेरा हो रहा था। रास्ते में उन्हें एक आम का पेड़ दिखाई दिया। पेड़ आमों से ल्दा था।

"देखो, हमें पेड़ पर चढ़कर एक आम तोड़कर न दोगे ? इस साल तो देखा ही नहीं है कि आम का स्वाद कैसा होता है।" चुडैल गङ्गा ने कहा।

"अब देर होगई है, अगर जरूरत हुयी तो कल टोकरे भर आम मँगवा दूँगा।" मोतीलाल ने कहा।

"मुझे अभी चाहिये। पेड़ पर चढ़कर दो आम अब नहीं दे सकते और टोकरे की बात कर रहे हो।" गङ्गा ने हठ किया।

विवश हो मोतीलाल पेड़ पर चढ़ने गया। वह पेड़ के नीचे गया था कि इतने में उसके ऊपर कोई आदमी गिरा। मोतीलाल भी नीचे गिर पड़ा, उसके पैर में मोच आ गई।

"अरे तूने समझ क्या रखा है ? जान बूझकर मेरे पति पर गिरता है।" गङ्गा ने नीचे पड़े हुये व्यक्ति से पूछा।

वह व्यक्ति उठकर और मोतीलाल को उठाते हुये धीमे धीमे कहने लगा-"माई ! पैर फिसलकर गिर पड़ा हूँ। जान बूझ कर नहीं गिरा हूँ। यह भगवान ही जानते हैं।" परन्तु चुडैल गङ्गा ने उसकी एक न सुनी। यह आँखे लाल करती हुयी उसे डाँटने

डपटने लगी-"गाँव में देख तेरी क्या हालत करती हूँ।"

मोतीलाल और गङ्गा गाँव पहुँचे। गङ्गा ने तुरन्त जा पञ्चायतदार के सामने निवेदन किया। पति ने कहा भी "रहने दो"। पर गङ्गा ने न सुनी। "तुम हमेशा ही ऐसे ही कहते हो। अगर गाँव वाले सब तुम पर टूट पड़े तो भी तुम ताकते खड़े रहोगे।" गङ्गा ने कहा।

पञ्चायतदार ने गङ्गा, मोतीलाल, और शामलाल को भी, जो मोती लाल पर गिर पड़ा था, बुलवा भेजा।

उनकी बातें सुनने पर पञ्चायतदार को विश्वास हो गया था कि शामलाल जान-बूझ कर नहीं गिरा था। उसने गङ्गा को समझाया भी कि इस बार शामलाल को क्षमा कर दें। "आपका न्याय क्या यही है ? यह दुष्ट आम के पेड़ पर छुप, मेरे पति के पेड़ के नीचे आते ही उन पर कूद सकता है। यदि यह आप के बस की बात नहीं है तो साफ साफ कह दीजिये। मैं और कहीं जाकर फैसला करवा लूँगी।" गङ्गा ने कहा।

"अच्छा ! जैसा न्याय तू चाहती है बैसा में किये देता हूँ। उस आम के पेड़ पर तुम्ही चढ़ो। शामलाल के उसके नीचे आते ही ठीक उसके ऊपर तू गिर पड़।" पञ्चायतदार ने कहा।

"क्या मैं पेड़ पर चढ़ूँ? अगर उस आदमी पर न पड़ कर कहीं नीचे गिर गई तो ? माना, आदमी पर ही गिरी, क्या मुझे चोट नहीं लगेगी?" गङ्गा ने पूछा।

"ये सब सन्देह शामलाल को भी हो सकते थे। फिर तुम शामलाल की बात पर क्यों नहीं विश्वास करती हो?" पञ्चायतदार ने पूछा।

गङ्गा को अक्ल आ गई।

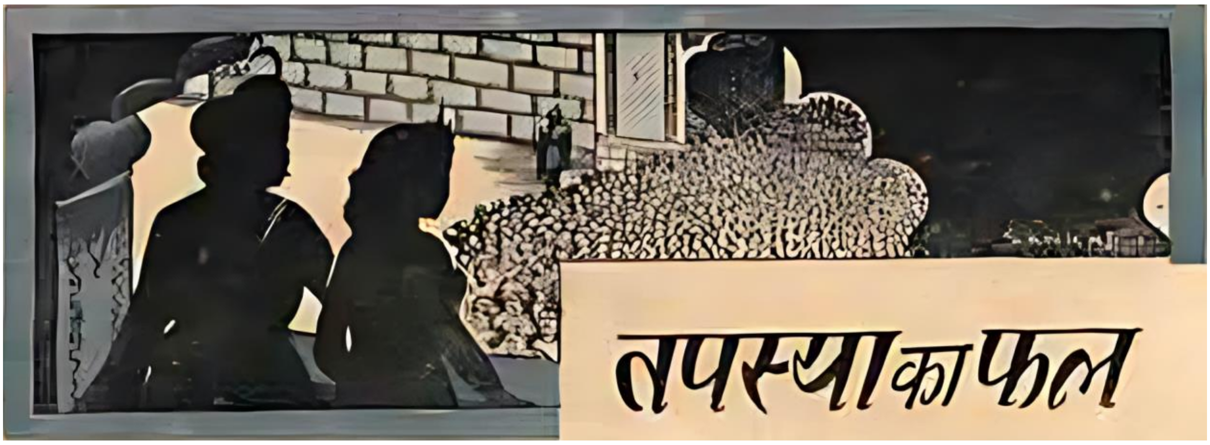

पुराने जमाने में राज्यवर्धन नाम का एक राजा था। प्रजा उसको पिता की तरह मानती थी। राजा भी उन्हे पुत्रवत् प्रेम किया करता था।

एक बार जब महारानी पति को स्नान करवा रही थी तब उसके आँखों में आँसू आ गये। वह देख कर राजा ने कारण पूछा। रानी ने आसू पोछते हुये कहा-"कारण क्या बताऊँ? आपके सिर के बाल पक रहे हैं। बुढ़ापा आ रहा है। यही सोचकर मुझे दुःख हो रहा है।"

यह सुन राजा ने इस प्रकार समझाया-"तुम इसी बात के लिये दुःखी हो रही हो ? बुढ़ापा सभी को आता है। बुढ़ापे के पीछे मृत्यु भी लगी हुयी है। यह तो स्वाभाविक ही है। अगर आज नहीं तो कल सब को मरना ही है। उसके बारें में दुःखी होने की भला क्या आवश्यकता है?"

परन्तु रानी का दुःख कम न हुआ। अपने पति की आयु वृद्धि के लिये वह तीन करोड़ देवताओं की प्रार्थना करने लगी। रानी को दुःखी देखकर राज्यवर्धन भी दुःखी रहने लगा। उलकी हालत धीमे धीमे ऐसी हो गई कि राज्य कार्य के लिये भी यह असमर्थ हो गया। उसे कुछ वैराग्य-सा हो गया।

इस परिस्थिति में मन्त्री ने सोचना प्रारम्भ किया कि क्या किया जाय। उसने सोचा-"यह अच्छा ही है कि राजा राज्य कार्य से निवृत्त हो जाय, क्यों कि बुढ़ापे के अतिरिक्त वह मानसिक दृष्टि से भी स्वस्थ न था।" इसी में मन्त्री ने राज्य का कल्याण समझा। फिर राज्य का परिपाटन करने के लिये राजा का बड़ा लड़का तो था ही।

विश्वनाथ

मन्त्री ने यह बात राजा के सम्मुख स्पष्ट स्पष्ट निवेदन कर दी।

राज्यवर्धन ने बड़े लड़के का पट्टाभिषेक करवाकर बानप्रस्थ लेना चाहा। अगले दिन ही राजा ने पुरोहित को बुलाकर मुहूर्त निश्चित करने के लिये कहा।

परन्तु प्रजा ने न माना। उन्होने एक कण्ठ से महाराज से यों प्रार्थना की- "हे प्रभू। आप अब तक पुत्रवत् हमें देखते आ रहे थे। आज आप हमें छोड़कर जा रहे हैं। यह सोच

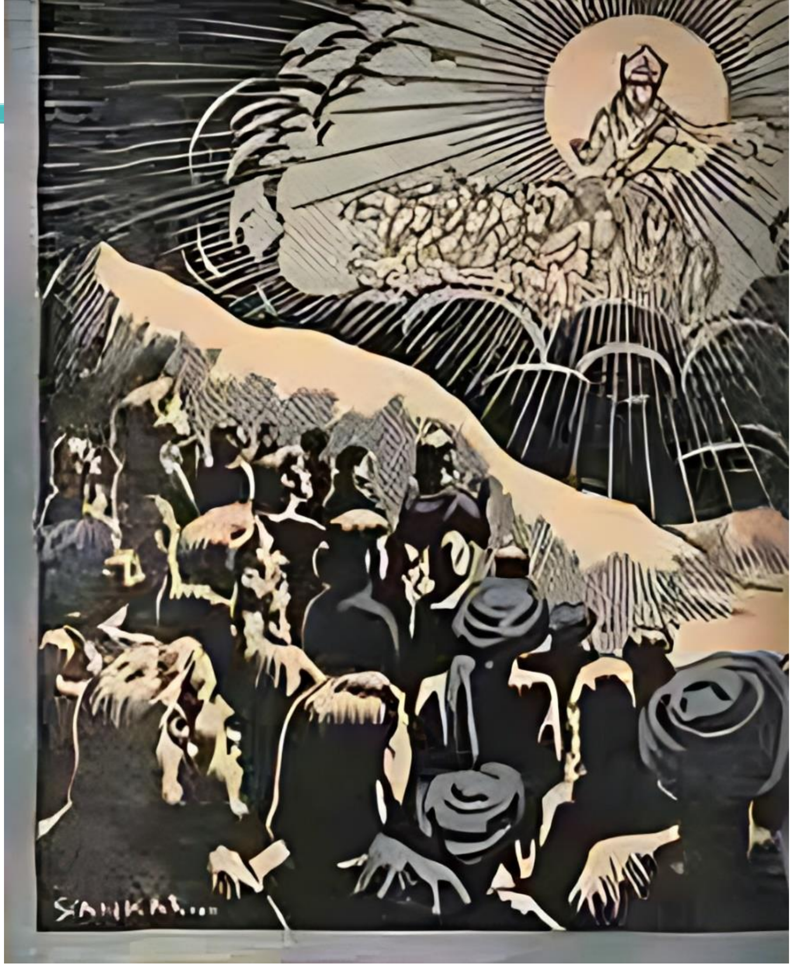

हमें दुःख हो रहा है। आप यहाँ रहिये। यदि आप नहीं रहेंगे तो हम भी आपके साथ चलेंगे।"

यह सुन राजा ने कहा-"मनुष्य के जन्म के साथ मृत्यु भी है। कोई मरे बिना नहीं रह सकता। मेरे जङ्गल में चले जाने पर भी मृत्यु मेरे पीछे लगी ही रहेगी। इसलिये मैं अपना बार्धक्य तपस्या में बिताना चाहता हूँ। आप घबराइये मत। आपके लिये एक राजा की नियुक्ति करके ही तो जा रहा हूँ।"

किन्तु प्रजा ने न मानी। उनमें से मुख्य व्यक्ति कई पुण्य क्षेत्र जाकर राजा की आयु वृद्धि के लिये तपस्या करने लगे। उन्होंने कई महीनों कठिन तप किया। तब उनको एक गन्धर्व ने प्रत्यक्ष होकर कहा-"आप सब कामरूप पर्वत पर जाकर साक्षात् सूर्य भगवान की तपस्या करें। वे ही आपकी इच्छा पूरी कर सकेंगे।"यह कह वह अदृश्य हो गया।

वे लोग यह सुन सन्तुष्ट हुये और कामरूप पर्वत पर गये। वहाँ जाकर घोर तपस्या की। कछ समय बाद सूर्य भगवान ने दर्शन दिये-"तुम्हारी इच्छानुसार राज्यवर्धन अभी एक हजार वर्ष जीवित रहेंगे।" यह कह वह अदृश्य हो गया।

तपस्या सफल हुई। यह जान वे सन्तुष्ट हुये। महाराज से यह बात कही। परन्तु राजा प्रसन्न न हुआ। यह देख रानी ने पूछा-"स्वामी ! प्रजा आप के लिये घोर तपस्या करके सूर्य भगवान से वरदान माँग कर लाई ह। आप दु:खी क्यों होते हैं? आपको तो प्रसन्न होना चाहिए।"

इस पर राजा ने कहा-"रानी ! तेरा कहना ठीक है। मेरी प्रजा मेरे लिये तपस्या करके वरदान लाई है। मैं शायद हजार वर्ष भी जिऊँगा। परन्तु वह प्रजा, जिसको मेरे ऊपर इतना विश्वास है उतने साल तो जियेगी नहीं? अगर मेरे साथ मेरी प्रजा हजार वर्ष नहीं जीती है तो मुझे सन्तोष कहाँ से मिलेगा ? इसलिये मैं भी मेरे जीवित रहने तक अपनी प्रजा की आयु वृद्धि के लिये तपस्या करूँगा। राजा भी कामरूप-पर्वत पर जाकर अपनी प्रजा की अयु वृद्धि के लिये घोर तपस्या करने लगा।

एक दो वर्ष बीत गये। राज्य कार्य शिथिल हो गया। चूँकि प्रजा नीतिवान थी, राज्य में अराजकता ने जोर नहीं पकड़ा। परन्तु उनके राजा की तपस्या कब सफल होगी यह सोच प्रजा उतावला होने लगी। प्रति दिन हजारों व्यक्ति कामरूप पर्वत जाकर राजा का दर्शन करने लगे।

आखिर सूर्य भगवान ने रज्यवर्धन की तपस्या की प्रशंसा की। उसके सामने प्रत्यक्ष हो कर सूर्य भगवान ने कहा-"राजा, हम तेरी सुबुद्धि की प्रशंसा करते हैं। तेरी तपस्या सफल हुयी। तेरी इच्छा के अनुसार तेरी प्रजा भी आजीवन तेरे साथ जियेगी।" यह वर देकर सूर्य भगवान अन्तर्धान हो गये।

सूर्य भगवान की कृपा से राज्य वर्धन और उसकी प्रजा, सर्व सुखों का अनुभव करते हुये हजार वर्ष जीते रहे।

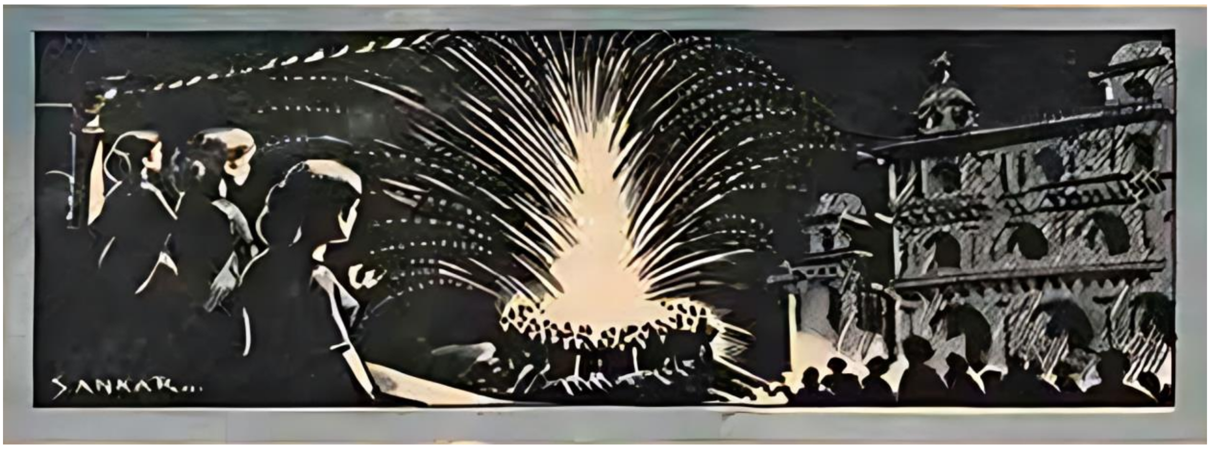

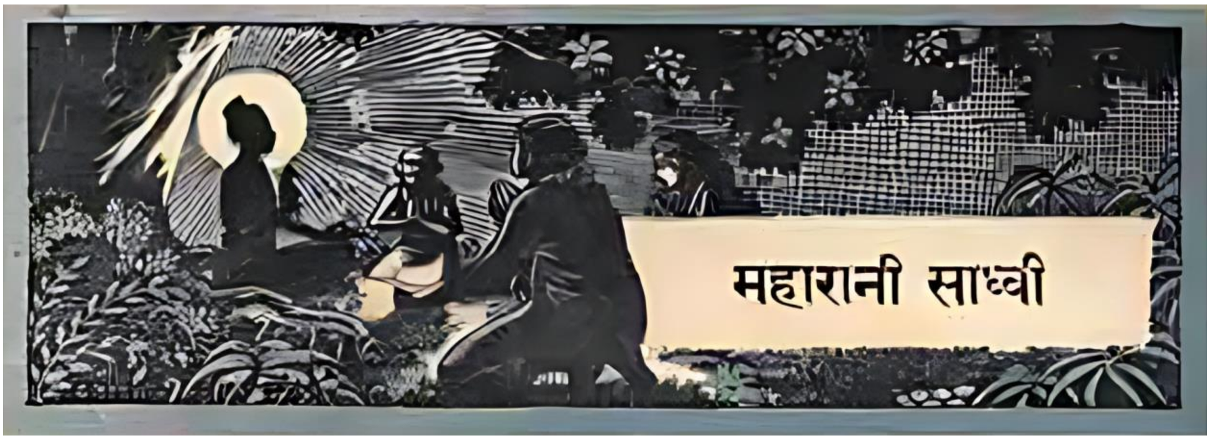

कई हजार वर्ष पहिले, जब ब्रह्मदत्त काशी का परिपालन करता था, तब पास ही में, बोधिसत्व एक सम्पन्न घराने में पैदा हुये।

बोधिसत्व ने छुटपन में ही सारी विद्यायें सीख लीं। उनके बड़े होते ही उनके माँ बाप ने काशी नगर में ही विवाह के लिये एक सम्बन्ध ढूँढ़ा। सुजाता नाम की लड़की को लाकर उनका उससे विवाह किया। सुजाता केवल रूपवती ही नहीं थी, परन्तु गुणवती और विवेकवती भी थी। उधर सास ससुर की सेवा करती, और इधर पति की भक्ति करती। वह घर में लक्ष्मी के समान थी।

बोधिसत्व भी उसे बहुत प्रेम करते थे। उन दोनों का मन एक था, विचार एक थे। वे आपस में बहुत हिल मिल कर रहा करते थे।

कुछ दिनों बाद, सुजाता ने अपने पति से कहा-"मुझे अपने माँ बाप को देखने की इच्छा हो रही है। वे वृद्ध हो गये हैं। यदि आप साथ आयें तो दोनों जाकर उनको देख आयें।" इस प्रकार उसने अपनी इच्छा प्रकट की।

यह सुन बोधिसत्व को सन्तोष हुआ। उन्होने कहा-"अच्छा, जरूर चलेंगे। मुझे भी सास ससुर को देखने की बहुत दिनों से इच्छा है। घर के काम काज के कारण में आगा पीछा कर रहा था, नहीं तो मैं ही तुमसे पहले चलने के लिये कहता।" उन्होने जाने के लिये तैयार होने को कहा।

देखते देखते तैयारियाँ हो गई। सामान गाड़ी में रख दिया गया। गाड़ी में जाकर सुजाता बैठ गई। बोधिसत्व आगे बैठकर गाड़ी हाँकने लगे। काशीनगर के

बाहर वे पहुँचे। एक पेड़ के नीचे बैलों को खोल दिया, हाथ पैर धोकर साथ लाये हुये भोजन को खाया। थोड़ी देर आराम करने के बाद, वे गाड़ी में फिर नगर की ओर चले।

जब बोधिसत्व की गाड़ी ने नगर के अन्दर प्रवेश किया तब कशी राजा हाथी पर चढ़ नगर का अवलोकन कर रहा था। राजा का जुलूस देखने के लिये, बोधिसत्व की अनुमति पा, सुजाता गाड़ी से उतरकर आगे जा रही थी। बोधिसत्व पीछे पीछे गाड़ी हाँक कर ला रहे थे।

हाथी पर बैठे हुये काशी राजा ने यकायक अति सुन्दर सुजाता को देखा। राजा के मन में उससे विवाह करने की इच्छा हुयी। उसके बारे में पूछताछ करने पर राजा को मालूम हुआ कि वह फलाने की पुत्री है, और गाड़ी में बैठा हुआ व्यक्ति उसका पति ही है।

तब राजा की दुर्बुद्धि पैदा हुई। तैसे उस व्यक्ति का पिण्ड छुड़ा, उसने सुजाता से विवाह करने का निश्चय किया। इसलिये उसने बहुत सोच विचार कर एक चाल चली।

उसने अपने एक विश्वास पात्र सैनिक को बुलाकर कहा-"उधर जाते जाने जरा इसे उस गाड़ी में डाल देना।" यह कह राजा ने अपन सोने का मुकुट उसे दे दिया। उस सैनिक ने बोधिसत्व की नजर बचाकर, उस मुकुट को गाड़ी में फेंक दिया। और यह बात राजा से कह दी।

तुरत हो हल्ला शुरू हुआ-"महाराज का मुकुट खो गया है, मुकुट चोरी चला गया है।" सारे शहर में शोर मच गया। राजाज्ञा दी गयी, जो जहाँ हो उसकी वहाँ तलाशी ली जाय। एक ने जाकर बोधिसत्व से कहा-"गाड़ी रोको"। गाड़ी को रोका और उसमें से मुकुट निकाल कर "यही चोर है" कहता कहता वह सैनिक बोधिसत्व को राजा के सामने खींचकर ले गया।

काशीराज क्रुद्ध हुआ, बिना सुनवाई के ही आज्ञा दी-"यह... यह बहुत ही दुष्ट है। इसका सिर काट दो।" अपनी चाल की सफलता देखकर वह दुष्ट राजा फूला न समाया। राजाज्ञा के अनुसार, सैनिकों ने बोधिसत्व को चाबुक मारते मारते शहर की गली गली में घुमाकर उनका अपमान किया। सिर काटने के लिये नगर के बाहर ले गये।

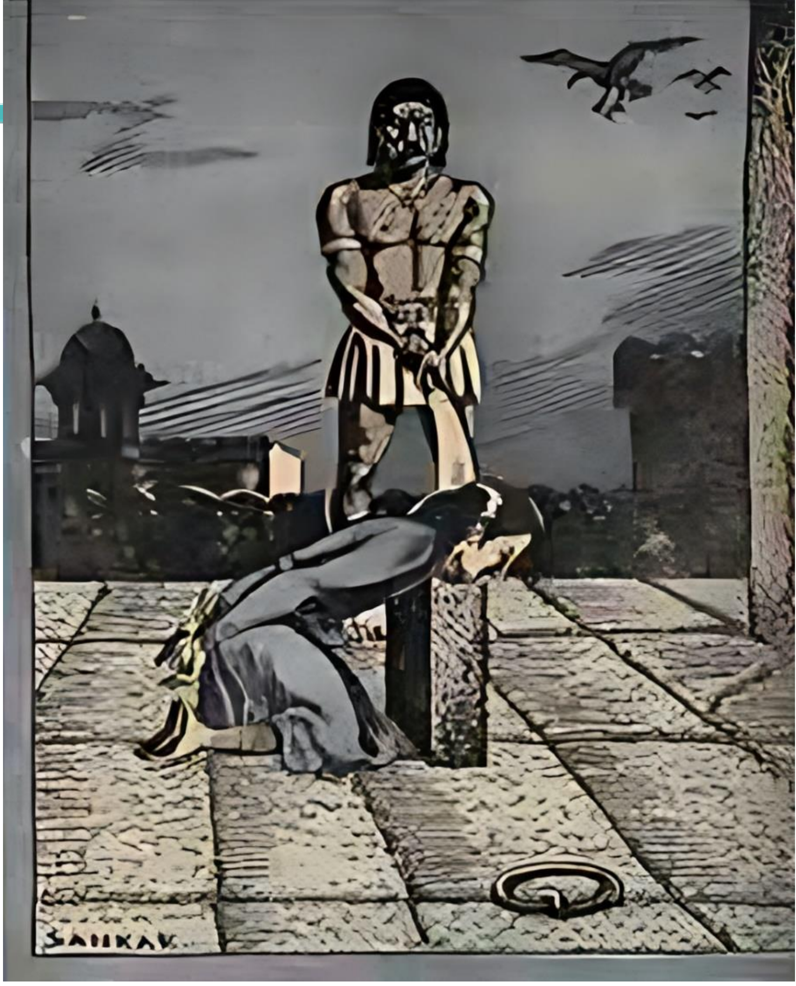

गाड़ी छोड़ सुजता चिल्लाती हुई बोधिसत्व के पीछे भागने लगी। "आपको मेरे कारण ही तो यह अपमान सहना पड़ रहा है।" यह दुःख के मारे छटपटाने लगी। सिर काटने के लिये जल्लाद ने बोधिसत्व को घुटनों के बल बैठाया। सुजाता बिलख बिलख कर विलाप करने लगी। "निर्दोषियों की रक्षा करने के लिये क्या परमात्मा नहीं है? दुष्टों के कारनामों को रोकने बाला क्या कोई नही है?" महा पतिव्रता सुजाता के इस प्रकार बिलाप करने पर स्वर्ग में देवेन्द्र का सिंहासन भी यकायक काँपने लगा।

"यह क्या है?" देवेन्द्र ने आश्चर्य से अपनी दिव्य-दृष्टि से देखा। सारी घटना को समझ कर उसने एक चमत्कार किया। अपनी महिमा द्वारा उसने राजा के स्थान पर बोधिसत्व को, और बोधिसत्व के स्थान पर राजा को रख दिया। उन दोनों के स्थानों में परिवर्तन कर दिया। वहाँ जमे हुये लोगों को इसके बारे में कुछ भी नहीं मालूम हुआ। लोगों ने हाथी पर बैठे हुये व्यक्ति को राजा ही समझा। परन्तु वस्तुतः वह राजा न था। राजा के कपड़े पहने हुये बोधिसत्व थे। जल्लादों के सामने वेदि पर बैठा बोधिसत्व, सचमुच बोधिसत्व न थे। उनके कपड़े पहने हुये राजा ही था।

क्यों कि जल्लादों को यह रहस्य नहीं मालूम था, इसलिये उन्होंने राजाज्ञा के अनुसार उसका सिर धड़ से अलग कर दिया। प्राणों के चले जाने पर, काशीराज ने अपना वास्तविक रूप ले लिया। सब को मालूम हो गया कि जिसको मारा गया है वह वास्तव में राजा ही था। लोगों में खलबली मच गई। इस विचित्र घटना का क्या कारण है यह सोच लोग आश्चर्य करने लगे।

तब देवेन्द्र बोधिसत्व और प्रजा के सामने प्रत्यक्ष हुये। वहाँ इकट्ठे हुये लोगों को गुजरी हुयी बात समझा दी। फिर कहा-"यह बोधिसत्व ही तुम्हारा राजा है। सुजाता तुम्हारी महारानी है।" यह कह वह अन्तर्धान हो गया। दुष्ट राजा के मारे जाने पर राज्य की प्रजा को बहुत सन्तोष हुआ। देवेन्द्र के कथनानुसार उन्होंने भी बोधिसत्व और सुजाता को महाराजा और महारानी के रूप में मान लिया।

तब से काशी राज्य में धर्म चारों पैरें। पर चलने लगा। देश धनधान्य से भरपूर हो गया।

अहंकार

बहुत समय पहिले कुमुद नाम के महर्षि ने विष्णु दर्शन के लिये घोर तपस्या की। कुछ समय बाद उसके सामने लक्ष्मी समेत विष्णु प्रत्यक्ष हुये। कुमुद से महाविष्णु ने पूछा- "जो इच्छा हो वर माँगो।"

बिना किसी अन्य इच्छा के ही, केवल विष्णु दर्शन के लिये ही कुमुद ने तपस्या प्रारम्भ की थी।

इसलिए विष्णु के वर माँगने को कहने पर वह भौंचक्का-सा रह गया।

लक्ष्मी देवी ने कुमुद की मनस्थिति को जान कर इस प्रकार कहा-"वत्स ! हम तुम्हरी भक्ति की प्रशंसा करते हैं। बर माँगना अभी आवश्यक नहीं है। हम फिर तुम्हें एक महीने में दर्शन देंगे। इस अवधि में तुम खूब सोच कर जो वर चाहो वह माँग सकते हो।"

लक्ष्मी देवी के यह कहने पर कुमुद का हृदय शान्त हुआ। दूसरे क्षण महाविष्णु लक्ष्मी के साथ अदृश्य हो गये।

कुमुद अपनी तपस्या को सफल पर बहुत आनन्दित हुआ। अपने आश्रम में पहुँच कर कुमुद ने शिष्यों को यह शुभ- समाचार सुनाया।

गुरु की अमोघ तप:शक्ति देख कर शिष्यों को बड़ा गर्व हुआ। साक्षात् महाविष्णु के वर देने पर भी न लेने वाले गुरु के त्याग की प्रशंसा के सहस्र कण्ठों से करने लगे। इन चौदह लोकों में उन जैसा त्यागी, महात्मा, महाभक्त, अनासक्त योगी

नहीं है, यह वे प्रचार करने लगे। इस प्रशंसा के कारण कुमुद में अहङ्कार की भावना पैदा हो गई। वह सोचने लगा कि इस संसार में उससे श्रेष्टतर कोई महर्षि नहीं है।

इस स्थिति में एक दिन कुमुद शिष्यों के साथ गङ्गा नदी में नहाने गये। वहीं नदी में स्नान करके आते हुये रेवत नाम का राजर्षि दिखाई दिया। उसकी पत्नी और बच्चों को देख कर कुमुद के शिष्यों को सन्देह हुआ कि यह भी क्या ऋषि है ! संशय की निवृत्ति के लिये उन्हाने गुरु से पूछा। तब कुमद ने यों कहा-"मुझे यह नहीं जानपड़ रहा है कि इस रैवत में ऋषि होने की क्या अर्हता है। जब कि सब कुछ त्याग कर, कन्दमूल खाते हुये वनों में घोर तपस्या करने वालों के लिये भी देव दर्शन दुर्लभ है।"

यह कुमुद ने कह तो दिया, पर उसको अपने आप ही अपने उत्तर पर सन्तोष नहीं था। महाविष्णु कुछ दिनों में तो दिखाई देंगे ही। उनसे ही पूछ कर इस संशय की निवृत्ति कर लूँगा, उसने निश्चय किया।

एक मास के व्यतीत हो जाने पर, विष्णु भगवान, लक्ष्मी के साथ फिर कुमुद को दिखाई दिये। कुमुद वर के बारे में भूल गया था, उसने रैवत राजर्षि के बारे में पैदा हुये अपने संशय के निवारण करने के लिये विष्णु भगवान से प्रार्थना की।

यह सुन महाविष्णु ने हँसकर कहा-"कुमुद! मेरे लिये भक्ति प्रधान है। यदि मन निर्मल नहीं है तो सन्यास लेने से भी क्या फायदा? फिर भी अगर तू इस संशय की निवृत्ति चाहता है तो श्री शैल के पास वाले स्वर्णग्रहार को जाओ।

वहाँ सुधर्म नाम का एक व्यक्ति है वह तुम्हारे संशय का निवारण कर देगा।" यह कह वह अन्तर्धान हो गया। तुरत कुमुद अपने शिष्य वृन्द के साथ श्रीशैल के लिये चल पड़ा। कुछ दिनों की यात्रा के बाद वे वहाँ पहुँचे। एक दिन वह प्रातःकाल शिष्यों के साथ पाताल-गङ्गा में स्नान के लिये गया। जब वे स्नान कर रहे थे तब एक मगर ने आकर कुमुद का पैर पकड़ लिया।

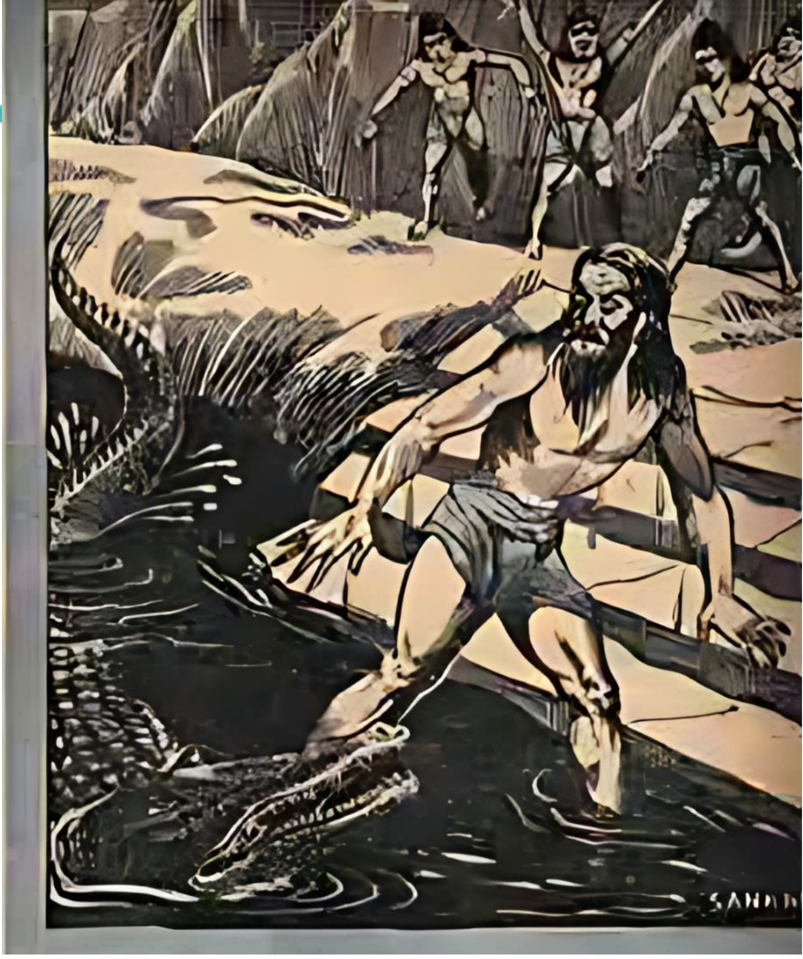

गुरु को मगर की पकड़ में पड़ा देख शिष्य भयभीत हो चिल्लाने लगे। परन्तु कुमुद ने मगर की ओर एकाग्र तीव्र दृष्टि से देखा। दूसरे क्षण, उसकी तपःशक्ति के फलस्वरूप मगर छटपटाकर मर गया। यह देख कुमुद का अहङ्कार और भी बढ़ गया।

एक दो दिन बाद कुमुद स्वर्णग्रहार पहुँचा। आखिर वहाँ पहुँचने पर सुधर्म घर में नहीं था। सुधर्म की पत्नी किवाड के पीछे बैठी हुई एक पुरानी फटी हुई साड़ी सी रही थी। कुमुद को देखकर उसने कहा-"मेरे पति के आने तक आप बाहर चबूतरे पर बैठिये।"

उस जैसे ऋषि की यथोचित मर्यादा नहीं हुई है यह सोच कुमुद बहुत कुपित हुआ। किवाड के पीछे बैठी हुई सुधर्म की स्त्री पर तीव्र दृष्टि से देखा। परन्तु वह मगर की तरह छटपटा कर नीचे नहीं गिरी।

इस कारण कुमुद को अपनी तपः शक्ति पर कुछ अविश्वास हुआ। इस बीच सुधर्म वहाँ आ गया, अतिथियों को घर के अन्दर ले गया। भोजन बना कर सुधर्म की पत्नी ने सब को भोजन परोसा।

कुमुद पत्तल के सामने बैठा। न जाने क्यों सब पकवान ठण्डे थे। कुमुद को बहुत गुस्सा आया। परिहास करते हुये....

"सुधर्म! पकवान तो काफी गर्म हैं।" कुमुद ने कहा।

सुधर्म ने कुमुद के परिहास को ताड़ लिया। "स्वामी ! ऐसो बात है तो मैं पंखे से हवा करता हूँ।" यह कह वह पंखा लेकर हवा करने लगा।

एक क्षण में पत्तल में पड़ी चीजें गरम हो गई और धुआँ भी उठने लगा। कुमुद को आश्चर्य हुआ।

हाथ धोने के लिये जब कुमुद कुँये के पास गया तो उसे वहाँ एक और विचित्र दृश्य दिखाई दिया। कुँये की घिरनी पर आधी खींची हुई ररसी, और कुँये में भरी बाल्टी लटकती हुई उसको दिखाई दी।

"पानी खींचते समय 'उनके' बुराने पर मैं खींचती खींचती रस्सी को छोड़कर चली गई थी।" सुधर्म की पत्नी ने आश्चर्य के साथ कुमुद से कहा।

उससे बढ़कर कोई नहीं है, संसार कूप में गोते लगाने वाले निम्न हैं, यह सोचने वाले कुमुद्र का यह देख गर्वमङ्ग हो गया।

हाथ जोड़कर नमस्कार करते हुये कुमुद ने सुधर्म से पूछा-"सुधर्म ! आप बड़े महात्मा हैं। सब कुछ परित्याग कर जो तपस्या नहीं करते हैं, क्या उनको मोक्ष प्राप्त होता है ?"

तब सुधर्म ने कहा-"कुमुद! निर्मल मन से भगवान की जो कोई भी, जहाँ भी प्रार्थना करता है, वह मुक्ति का अधिकारी होता है। जङ्गलों में कन्दमूल खाते हुये, निर्मल मन के न होने पर तपस्वी अहङ्कारी के लिये मोक्ष के द्वार नहीं खुलते।"

इस तरह कुमुद के संशय की निवृत्ति ही नही हुई अपितु उसके अहङ्कार का नाश भी हो गया। तब से निर्मल मन से भगवान का ध्यान कर वह मुक्ति को प्राप्त हुआ।

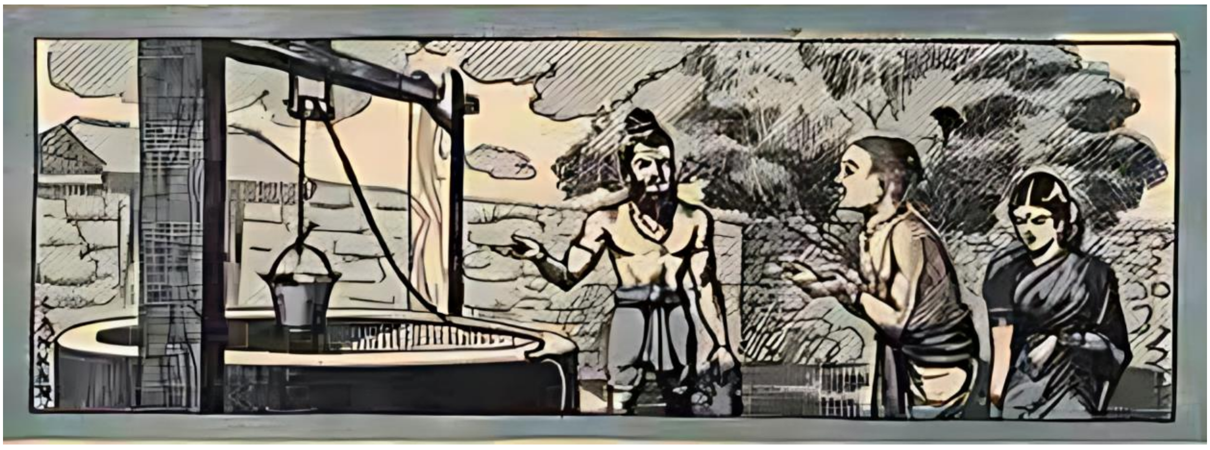

चतुर्नेत्र की कहानी सुनते हुये समरसेन को बहुत आश्चर्य हो रहा था। अपने मन्दिर को मिट्टी पत्थर से न बनवाकर, सोने चान्दी से बनवाने की देवी की आज्ञा उसको बड़ी विचित्र-सी लगी। मन्दिरों का सोने चान्दी से बनवाना तो मनुष्य मात्र के लिये सम्भव है नहीं।

"चतुर्नेत्र। चण्डी देवी का अपने भक्त को इतना दुस्साध्य काम देना सुनकर मुझे बड़ा अचरज हो रहा है।" समरसेन ने हाथ मलते हुए विनय से कहा।

चतुर्नेत्र सिर हिलाते हुये जोर से हँसा।

"समरसेन ! तुम नहीं जानते शक्ति की उपासना का क्या मतलब है। इस संसार के समस्त सुख प्राप्ति के लिये, और दूसरे मनुष्यों पर अधिकार चलाने के लिये ही लोग अक्सर शक्ति की पूजा करते हैं। देवी इस से पहिले की उनकी इच्छा पूर्ति करे उनके धैर्य, साहस आदि के अतिरिक्त उनकी भक्ति की भी परीक्षा लेती है। वह हर तरह से

उनको परखती है। हमारे राजा शाक्तेय की भी उसने कठिन परीक्षा ली।

"तो क्या वह उतना सोना चान्दी प्राप्त कर सकेगा ?" समरसेन ने पूछा। तब चतुर्नेत्र ने कहना शुरू किया।

"वही तो मैं बताने जा रहा हूँ। धनराशी से भरी नाव, उसकी रखवाली करने वाली नागकन्या, इन सब का वृत्तान्त भी इसी में है न। मेरा और एकाक्षी का जानी दुश्मन बनने का कारण भी इसी सिलसिले में बताऊँगा। इसका मूल कारण शमन द्वीप में व्यक्त की हुई चण्डी देवी की इच्छा, और उसको पूरी करने का शाक्तेय का सङ्कल्प ही हैं।

खैर, शाक्तेय ने देवी की इच्छा को पूरी करने का निश्चय कर लिया। अच्छा तो यह होगा कि उसको देवी की इच्छा न कहकर देवी की आज्ञा कहा जाय। अगर शाक्तेय ने उतना धन इकट्ठा करना था, तो उसके सामने भी, तुम्हारी तरह दूसरे राज्यों पर हमला करने के सिवाय कोई रास्ता न था। यह वह अच्छी तरह जानता था।

तब शाक्तेय ने सैनिकों की भर्ती के लिये राज्य में घोषणा करवा दी। अच्छे हट्टे कट्टे, बहादुर, तगड़े नौजवानों को अपनी सेना में भर्ती करने लगा। एक एक गाँव को जाता, वहाँ के नौजवानों को एक जगह एकत्रित करता, कुश्ती के दङ्गल करवाता, तलवार चलाने में मुकाबला करवाता, लाठी चलवाता और जो उनमें जीतते उनको अपना सैनिक बना लेता।

जब शाक्तेय इसप्रकार सैनिकों की भर्ती कर रहा था तब मैं शायद २० वर्ष का जवान था। एकाक्षी की भी वही उम्र थी; हम दोनों एक ही गाँव में रहा करते थे और एक ही काम किया करते थे।

तो अब मुझे, एकाक्षी और अपने बाल्य के बारे में अब कहना ही होगा। उस विरोध ने कई बल खाये आखिर उसने इस द्वीप को भी मानव रहित कर दिया। तब एकाक्षी एक आँखवाला नहीं था। इस द्वीप में आने के बाद ही मेरे नौकर उलूक ने ही उसकी एक आँख निकाल ली थी।

यह तो मैने कह ही दिया है कि हम दोनों एक ही गाँव के रहनेवाले थे। उस गाँव में हम दोनों के घर भी आसपास थे। इस कारण, हम दोनों में शुरू से ही स्नेह माव की अपेक्षा शत्रु भाव ही अधिक था। परन्तु उसको वर्तमान दशा तक आने में बहुत समय लगा। मुझे और एकाक्षी को छठे वर्ष से पशुओं को चराने का काम दिया गया। हमारा काम गाँव की मुखिया के बकरियों को जङ्गल में चर लाना था। क्योंकि तब हम बहुत छोटे थे, जङ्गल में शिकार खेलने का हमें हक नहीं था। जो लोग बड़े और ताकतवर थे वे ही शिकार खेलने जाया करते थे।

एक बार में एकाक्षी और कुछ और लड़के जङ्गल में बकरियाँ चराने ले गये। उस जगह बड़े-बड़े पेड़ थे। वहाँ बाघ और शेर ही नहीं, हर तरह के क्रूर जन्तु रहा करते थे। परन्तु पशुओं को चराने के लिये

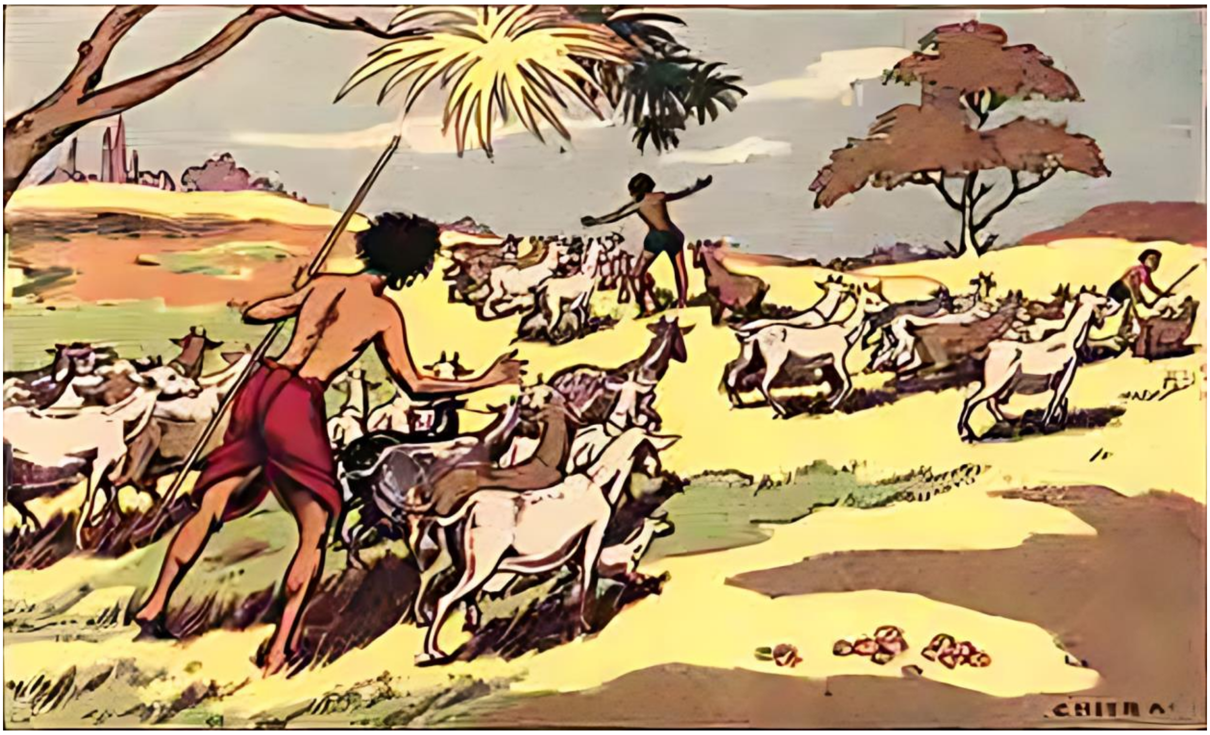

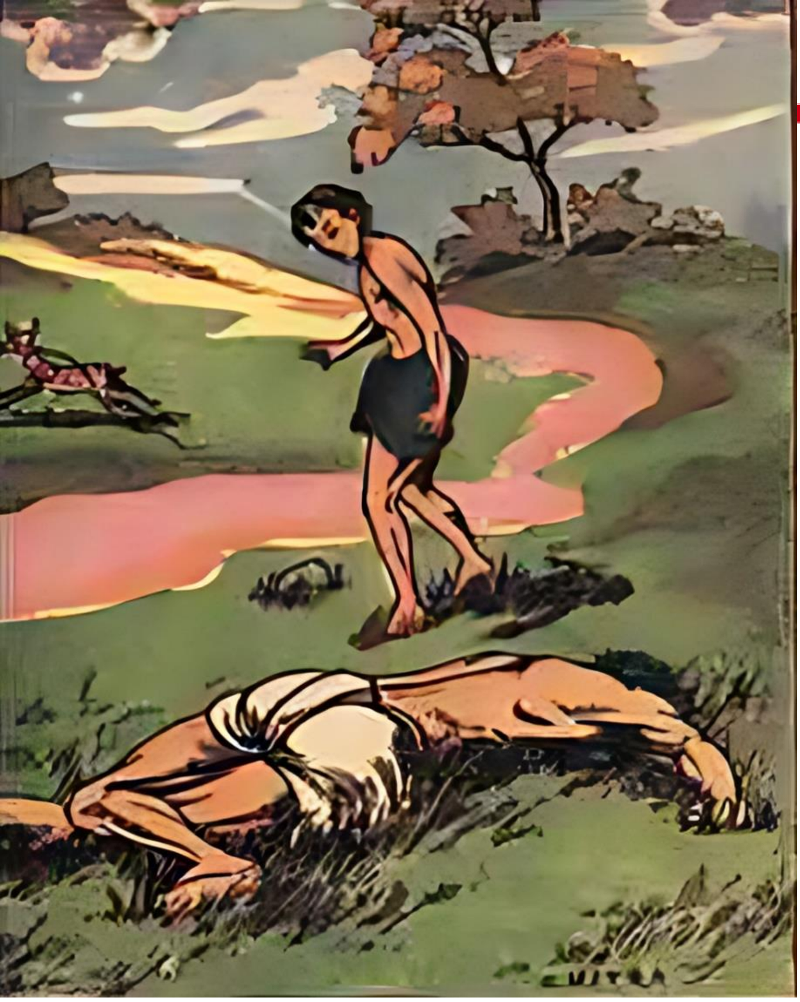

भी उससे अच्छी जगह शायद आसपास कहीं न थी।

बकरियों को चरने छोड़, सब चराने बाले एक पेड़ के नीचे बैठ गये। तब यकायक, जहाँ मेरी बकरियाँ चर रहीं थीं एक हिरण का बच्चा आकर चिल्लाने लगा। शायद वह अपनी माँ से बिछुड़ कर उस तरफ आ गया था।

हरिण के बच्चे को देखते ही, उसे पकड़ कर पालने की मेरी इच्छा हुई। उठ कर एक छलाँग में ही में वहाँ पहुँच गया। इस बीच में एकाक्षी ने भी उस हरिण के बच्चे को देखा। 'उसे पहले मैने देखा है। वह मेरा है।' चिल्लाता-चिल्लाता वह मेरे पीछे दौड़ने लगा।

परन्तु मैंने उससे पहले भाग कर उस हरिण के बच्चे को पकड़ लिया। उसके गले में अपनी रस्सी बाँध कर मैं खींचने लगा। इतने में एकाक्षी मेरे पास आकर, यह कहकर कि 'हरिण का बच्चा मेरा है!' गाली दे देकर मुझमे झगड़ने लगा। मुझे बहुत गुस्सा आया; मैं अपने को रोक न सका। वहाँ पड़े हुए एक पत्थर को लेकर उसके सिर पर दे मारा। रोता-चिल्लाता एकाक्षी नीचे गिर पड़ा।

इस गड़बड़ी में हरिण का बच्चे ने रस्सी के साथ भागना शुरू किया। मैं भी उसके पीछे दौड़ा। झाड़-झंखाड़ों के बीच भागता भागता आखिर जैसे-तैसे मैंने उसे पकड़ लिया। तब मैं बहुत थक चुका था। हरिण का बच्चा मेरे पास से भाग जाने के लिये रस्सी खींचने लगा। मैंने भी उसे पकड़े रखने के लिये रस्सी मज़बूती से पकड़े रखी। मेरे लिये उसको सम्भालना मुश्किल हो गया।

उस हालत में दिल को दहला देनेवाला सिंह-गर्जन सुनाई दिया। शायद बहुत समीप

ही से। मैंने झट हरिण के बच्चे को एक पेड़ से बाँध दिया और स्वयं पेड़ पर जल्दी जल्दी चढ़ने लगा।

जान में जान आने के बाद मुझे मालूम हुआ कि मैंने गलती की थी। पेड़ से बँधा हरिण का बच्चा गले में बँधी रस्सी छुड़वाने के लिये चिल्लाने लगा। मुझे डर लगा कि अगर कहीं शेर दूर भी जा रहा हो तो उसका चिल्लाना सुन पास आ जायेगा। मेरा डर सच भी निकला। दो चार मिनटों में वहाँ शेर आ ही पहुँचा।

मैं क्योंकि पेड़ पर बैठा था मेरे लिये जान का खतरा न था। परन्तु नीचे बँधे हुये हरिण के बच्चे पर शेर उछला। मौत के डर के मारे चिल्लाते हरिण को मैं बैठे बैठे देख न सका। एक सूखी टहनी को तोड़कर नीचे शेर पर फेंका। वह एक बहुत बड़ी गलती थी। तभी शेर ने सिर ऊँचा कर मुझे खूब घूर घूर कर कुछ देर तक देखा।

शेर ने पहिले हरिण को मारा, और जितना उसने खाना चाहा, खा लिया। खाते खाते, रह रह कर वह सिर ऊँचा कर मेरी तरफ देखने लगा। आखिर पेड़ पर मुझे

पकड़ने के लिये शेर उछला। मैं भी उसकी पहुँच से दूर और ऊपर चढ़ गया। तब भी शेर ने अपना प्रयत्न न छोड़ा। सूर्यास्त समय तक यह पेड के नीचे ही धरना देकर बैठा रहा।

मुझे उस रात को नींद नहीं आई। सवेरे भी में पेड़ से नीचे उतरने के लिये डर रहा था। मुझे मालूम था, भले ही शेर पेड़ के नीचे न हो, पर जरूर कहीं आस पास घूम रहा होगा। वह मेरी ताक में होगा। कभी कभी उसका भयङ्कर गर्जन भी सुनाई पड़ता था।

उस रोज, ठीक दुपहरी में मुझे शोर शराबा सुनाई दिया, ऐसा लगा कि कान फूट जायेंगे। यह इस बात की सूचना थी कि गाँववाले मुझे ढूँढ़ने के लिये जोर-शोर से निकल पड़े हैं। साथ के लड़कों ने जाकर गाँव में कह दिया होगा कि मैं जङ्गल से वापिस नहीं लौटा था।

उन लोगों का शोर धीमे धीमे पास आने लगा। मैंने सोचा कि पेड़ से उतर कर उनके पास जाऊँ पर हिम्मत नहीं हुई। मेरा यह सन्देह अभी तक नहीं गया था कि कल बाला शेर वहाँ नहीं है।

बरछे और कटार आदि पकड़े चालीस पचास हमारे गाँववाले शोर करते जङ्गल में चले आ रहे थे। कई तालियाँ बजा रहे थे। वे सब मुझसे कोई पचास गज की दूरी पर आये।

शेर के बारे में जो मेरा सन्देह था वह सच निकला। झाड़ियों के पीछे छुपा शेर उनपर यकायक कुदा। गाँववाले भी यह सोचकर कि ऐसी घटना सम्भव है, खूब सावधान होकर आ रहे थे। एक हट्टे कट्टे नौजवान ने शेर के पञ्जे को अपने हाथ में लिये हुये काठ की ढ़ाल से रोका। उसी

समय एक और नौजवान ने पीछे से उसकी पूँछ को मरोड़ा।

शेर ने गरजते हुये पीछे मुड़ना चाहा। इतने में सामने वाले नौजवान ने शेर के गले पर अपना बरछा मारा। चोट खाकर चिंघाड़ते हुये शेर पर नौजवान ने निशाना बना अपनी छुरी मारी।

शेर बुरी तरह घायल हो गया था। उन दोनों नौजवानों ने मिलकर अपने हथियारों से उसको इधर उधर, सब जगह भोंका। शेर मरकर नीचे गिर पड़ा। पेड़ पर बैठे हुये मुझको, यह सब देख बड़ा सन्तोष हुआ। जल्दी जल्दी पेड़ पर से उतरते हुये में बड़ी जोर से चिल्लाया।

उस क्षण जो मैंने विचित्र नजारा देखा, उसका मैं ही विश्वास न कर सका, और लोग तो क्या करेंगे? मेरे जोर से चिल्लाते ही सबकी नजरें मुझ पर पड़ीं। दूसरे क्षण, ताली बजाते हुये 'भूत, भूत' चिल्लाता हुआ एकाक्षी भागने लगा। चुटकी बजाते ही वे सब के सब 'भूत भूत' चिल्लाते वहाँ से भाग खड़े हुये। मैं कुछ समझ न सका।"

"यह तो बड़ी अजीब सी बात लगती है। आपको देखकर इतने सारे आदमी और बड़े बड़े लोग भी, 'भूत भूत' कह कर क्यों दौड़ पड़े ?" समरसेन ने पूछा।

यह सुन कर चतुर्नेत्र ने सिर एक तरफ झुका कर इस प्रकार कहा :-

"यह सब एकाक्षी की करतूत थी। उस छोटी उम्र में ही वह कितना दुष्ट बुद्धि का था, यह एक घटना अच्छी तरह दिखाती है। उसने हमारे गाँव के सब बड़े छोटों को विश्वास दिला दिया था कि मैं भूत हूँ। उसके बाद दस साल तक मुझे जङ्गलों में भूत की तरह जीना पड़ा, दर-दर भटकना पड़ा। हर तरह के कष्ट झेलने पड़े।"

(अभी और है)

जङ्गल के पासवाले एक गाँव में एक नौजवान किसान रहा करता था। वह छुटपन से ही खेतीबाड़ी का काम करता आया था। परन्तु खेती करते करते वह अब उठा था। वह सोचने लगा कि जब धनुष बाण लेकर, जङ्गल में शिकार कर पेट भरा जा सकता है तो खेती क्यों की जाय ?

तब से धनुष बाण लेकर उसने जङ्गल में पशुपक्षियों का मारना शुरू कर दिया। हरिण और मोर जैसे बेचारे सुन्दर प्राणी भी उसके बाणों के शिकार होने लगे।

एक बार जब वह शिकार कर रहा था बहुत भयङ्कर आँधी आयी। वह पास वाले एक फूस की झोपड़ी में वर्षा से बचने के लिये घुस गया। कुछ देर बाद, बगल वाले एक और फूस की झोपड़ी में उसे कुछ शब्द सुनाई दिया। वह झोपड़ी से निकल कर उस तरफ चल पड़ा।

उस झोपड़ी में तीन विचित्र मनुष्य दिखाई दिये। वे तीनों के तीन बौने थे। उन्होने लम्बी लम्बी अचकने पहिन रखी थी जो घुटनों तक लटक रही थी। टोपियाँ भी पहनी हुयी थीं। वे चूल्हे में आग जला रहे थे।

आश्चर्य करते हुये उसने और ध्यान से देखा। तीन सोने के बर्तन भी वहाँ थे, वे कुछ पकाते से लगते थे। उन तीनों में से एक कढ़ाई में दूध डाल रहा था। एक निगरानी कर रहा था, एक और ईन्धन ठीक कर रहा था। यह देख किसान नौजवान ने अनुमान किया कि वे कोई मीठा पकवान तैयार कर रहे हैं।

सब कुछ तैयार हो जाने पर उन तीनों में से एक ने एक चान्दी का बाजा निकाला। वह बाजा उस बौने से ठीक सात गुना बड़ा था। उसके बाजे बजाने पर, बाजे की

ध्वनि से सारी भूमि काँप सी उठी और उसके बाद तुरन्त आस पास के पशु पक्षी उन दोनों के पास आ गये। किसान नवयुवक सोच रहा था कि उन लोगों ने उसे देखा नहीं है। परन्तु उन्होने उसका नाम लेकर पुकारा। वह अचम्भे में पड़ गया। उन बौनों ने पास रखे सोने के पात्रों को दिखाकर कहा-"इनमें से तुम्हे जो चाहिये ले लो, जो बस्तु तुम लोगे उसी के अनुसार तुम्हें फल मिलेगा।"

तीनों बर्तनों में तीन प्रकार के पेय थे। सफेद, दूध की तरह वाले पेय को उस नवयुवक ने चुना। उन लोगों ने नवयुवक को वह पीने के लिये कहा। उसने वैसा ही किया।

सब बौने ताली बजाते, गाते उस नवयुवक के चारों ओर नाचने लगे। "अरे भाई, तुमने ठीक चीज चुनी है। चान्दी का बाजा तुमने जीत लिया है।" कह कह कर एक बौना कूदने फाँदने लगा।

"इस बाजे की महिमा बहुत है। ठीक इसी प्रकार के बाजे और बनाकर तुम साथ के पशु पालकों को देकर उन्हें बजाना सिखा सकते हो। इस बाजे के बजाने से, जङ्गल में जहाँ जहाँ पशु हैं वहाँ वहाँ से वे आकर पशु बजाने वाले के पास इकट्ठे हो जाते हैं।" दूसरे बौने ने बताया।

उसके बाद तीसरे बौने ने कहा-"भाई, यदि तू सुख से जीना चाहता है तो हरिण और मोरो का शिकार करना छोड़ कर खेती बाड़ी करना आरम्भ कर।"

यह कह कर तीनों अदृश्य हो गये। वे बर्तन भी, जिसमें उन्होने वह पेय पकाया था, गायब हो गये। उनका दिया हुआ चान्दी का बाजा केवल रह गया। वह जहाँ रखा था, वहीं पड़ा रहा।

वह किसान नवयुवक उत्साह पूर्वक जल्दी जल्दी घर पहुँचा। उसने वह बाजा पत्नी को दिखा कर गुजरी हुई विचित्र घटना को एक सिरे से सुना दिया। वह बहुत सन्तुष्ट हुयी। चूँकि वह आरम्भ ही से नहीं चाहती थी कि उसका पति अच्छी भली खेतीबाड़ी को छोड़कर शिकार के लिये जङ्गल में फिरा करे। अब इन बौनों के हितोपदेश के कारण उसने शपथ ले ली थी कि वह कभी शिकार नहीं करेगा, इसलिये उसकी पत्नी खुश थी।

परन्तु कुछ दिनों बाद वह शिकार की इच्छा को न रोक सका। आदत के अनुसार फिर जङ्गल में आकर उस नययुक्क किसान ने एक हरिण को मारा और उसने वह बात किसी को न जानने दी।

हर रोज की तरह; सायंकाल घर आते हुये उसने चान्दी का बाजा बजाया। इस तरह बाजा बजाने से रोज उसकी पत्नी उसके पास आकर मिलती थी। परन्तु आज, बाजे के बार बार बजाने पर भी वह पास न आई।

इस बीच में अन्धेरा हो गया। आकाश में तारें भी चमकने लगे। नवयुवक के पत्नी को लाख बुलाने पर भी कोई उत्तर न मिला। पर जाकर देखा तो उसकी पत्नी वहाँ न थी।

अगले दिन --

वह फिर सदा की तरह जङ्गल में पशुओं को चराने ले गया। वहाँ उसको साथ के पशुपालक ने यों कहा-

"भाई, कल बकरियों को चराते समय मैंने विचित्र घटना देखी। पहाड़ी पर एक स्त्री खड़ी हुई थी। वह मुस्कुराती हुई ऐसी लगती थी जैसे कोई वनदेवी हो। उसने एक बहुत सुन्दर गाना भी गाया। मैं उसको

एकटक देखता रहा। पर न जाने इस बीच में कहीं से एक बाण जहाँ वह खड़ी थी, आकर पड़ा। उस बाण के लगने के पहले ही वह सी अदृश्य हो गयी। उसको अदृश्य करने वाला बाण यह है, देखो।" कहता हुआ उसने बाण निकालकर उस किसान नवयुवक को दे दिया। नवयुवक के आश्चर्य की सीमा न थी। देखने पर उसे याद आया कि वह बाण वही था, जो उसने कल हरिण पर छोड़ा था।

तब नवयुवक को बौनों का दिया हुआ हितोपदेश स्मरण हो आया। उसे अपने बाणों से विरक्ति हो गई और उसी क्षण आग में डालकर उन्हें भस्म कर दिया। फिर उसने प्रतिज्ञा की वह कभी शिकार न खेलेगा। तब से पशुओं के चराने के अतिरिक्त उसने सब अन्य कार्य छोड़ दिये।

फिर उसने कई दिन तक अपनी पत्नी को दिन रात प्रतीक्षा की।

एक दिन सपने में फिर वे बौने दिखाई दिये और उन्होंने कहा- "प्रतिज्ञा का न पालन करना बहुत बड़ी गलती है। इसका तुमने परिणाम भी देख लिया है। अगर इस बार कम से कम अपनी प्रतिज्ञा का ठीक तरह से तुमने पालन किया, इस साल के समाप्त होते ही तुम्हारी पत्नी तुम्हारे पास वापिस आ जायेगी। तुम्हारा जीवन फिर से सुखी हो जायेगा।"

किसान नवयुवक ने अपनी प्रतिज्ञा का उल्लंघन नहीं किया। साल के समाप्त होने पर जब वह शाम को जङ्गल से घर वापिस आ रहा था; उसको अपनी पत्नी दिखाई दी। नवयुवक बहुत ही प्रसन्न हुआ। उसने जीवन भर पशुओं को चरा कर अपनी प्रतिज्ञा को पूरी की।

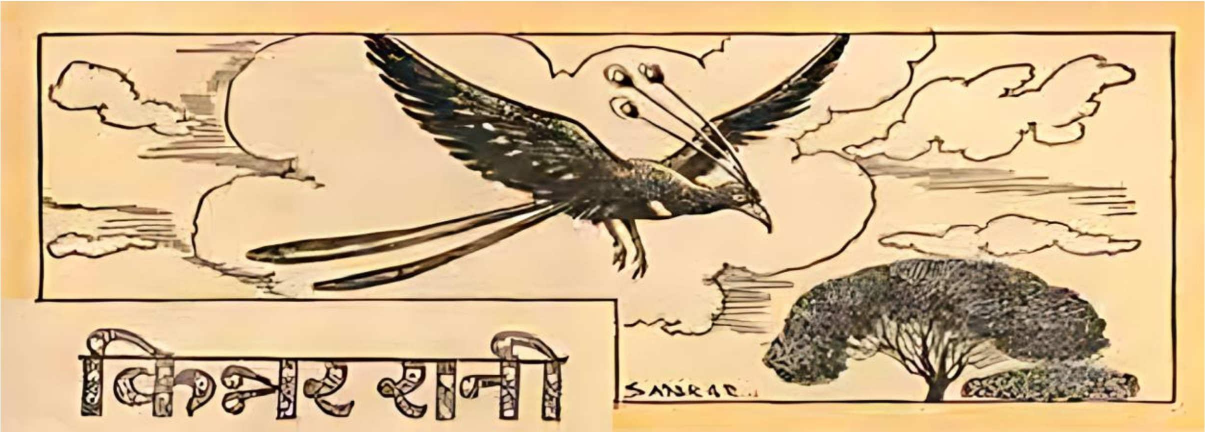

काश्मीर देश में एक गरीब आदमी रहा करता था। वह रोज जङ्गल जाकर, रङ्ग बिरङ्गे पक्षियों को पकड़ कर उन्हें बेचकर अपने लड़के सुदामा का पालन पोषण किया करता था। कुछ दिनों बाद पिता के मर जाने के कारण सुदामा अकेला ही रह गया था। छोटी उम्र में ही उसे अपने पैरों पर खड़े होने की नौबत आ पड़ी थी।

पिता के मरने के अगले दिन ही, पक्षियों को फँसाने का पिञ्जड़ा लेकर वह जङ्गल गया। पिञ्जडे को एक पेड़ की शाखा पर रख वह बैठ गया। कुछ देर में, उस पिञ्जड़े में एक कौआ फँसा। उस कौवे को कौन खरीदेगा? जब सुदामा यह सोच ही रहा था कि पिञ्जड़े में से कौआ मनुष्य स्वर में बोला-"महोदय ! अगर तुम मुझे छोड़ दोगे तो मैं तुम्हारा बहुत उपकार करूँगा। कल ही मैं इस पिञ्जड़े में एक बहुत ही सुन्दर पक्षी फँसवा दूँगा। यदि तुम उसको राजा के पास ले गये तो वह तुम्हें बहुत धन देकर उस पक्षी को खरीद लेगा।"

कौवे की बातों का विश्वास कर सुदामा ने उसे पिञ्जड़े में से उड़ा दिया। कौवे के कथानुसार अगले दिन उसके पिञ्जड़े में एक अत्यन्त मनोहर पक्षी फँसा। जब उसे ले जाकर महाराजा को दिया तो वह बहुत सन्तुष्ट हुआ और सुदामा को उसने बहुत-सा सोना दिया। इतना धन तो मिल गया था; परन्तु सुदामा के कष्ट अभी समाप्त नहीं हुये थे। क्योंकि......

काश्मीर महाराजा के दरबार में एक विद्रूपक रहा करता था। महाराजा को एक पक्षी के लिये इतना धन सुदामा को देता देख, वह ईर्ष्या से जल उठा। इस कारण

मुकुन्दलाल

उसने महाराजा से कहा-"हुजूर! इतने सुन्दर पक्षी को एक लोहे के पिञ्जड़े में रखना अच्छा नहीं लगता। इसके लिये हाथी दाँत का एक घर बनवाना चाहिये।"

"घर बनवाने के लिये इतना हाथी का दाँत कहाँ से मिलेगा ?" महाराजा ने पूछा।

"इतने सुन्दर पक्षी को पकड़ कर जो ला सका है क्या वह हाथी दाँत न ला सकेगा? उसे ही लाने की आज्ञा दीजिये।" विदूषक ने सुझाया।

महाराजा ने खुदामा को बुलवाकर आज्ञा दी-"तेरे लाये हुये पक्षी के लिये हाथी के दाँत का घर बनवाने का निश्चय किया है। उसके लिये जरूरी हाथी दाँत लाओ। इस काम के लिये चालीस दिन का समय देता हूँ। यदि इस अवधि में यह काम न हो सका तो तुम्हारा सर धड़ से अलग कर दिया जायेगा।"

बिचारा सुदामा दुःखी दुःखी घर गया। तब कौवे ने आकर पूछा-"क्यों भाई, इतने उदास क्यों बैठे हो ?"

सुदामा ने अपने कष्ट के बारे में कौवे से कहा। "इस बात के लिये इतने

दुःखी होने की क्या जरूरत है? राजा से चालीस पीपे शराब देने के लिये कहो। यहाँ से सौ योजन दूरी पर एक झील है। उस झील में हाथियों के झुण्ड के झुण्ड पानी पीने के लिये आते हैं। यदि तुमने उस झील में शराब मिला दी तो तेरा काम पूरा हो जायेगा।" कौबे ने सलाह दी।

सुदामा ने झट महाराजा के पास जाकर कहा-"प्रभू! यदि आप मेरे साथ गाडियों में चालीस शराब के पीपे भेज देंगे तो मैं आवश्यक हाथी दान्त निश्चित अवधि में ले आऊँगा।" महाराज ने मान लिया और गाडियों में शराब के चालीस पीपे भी भेज

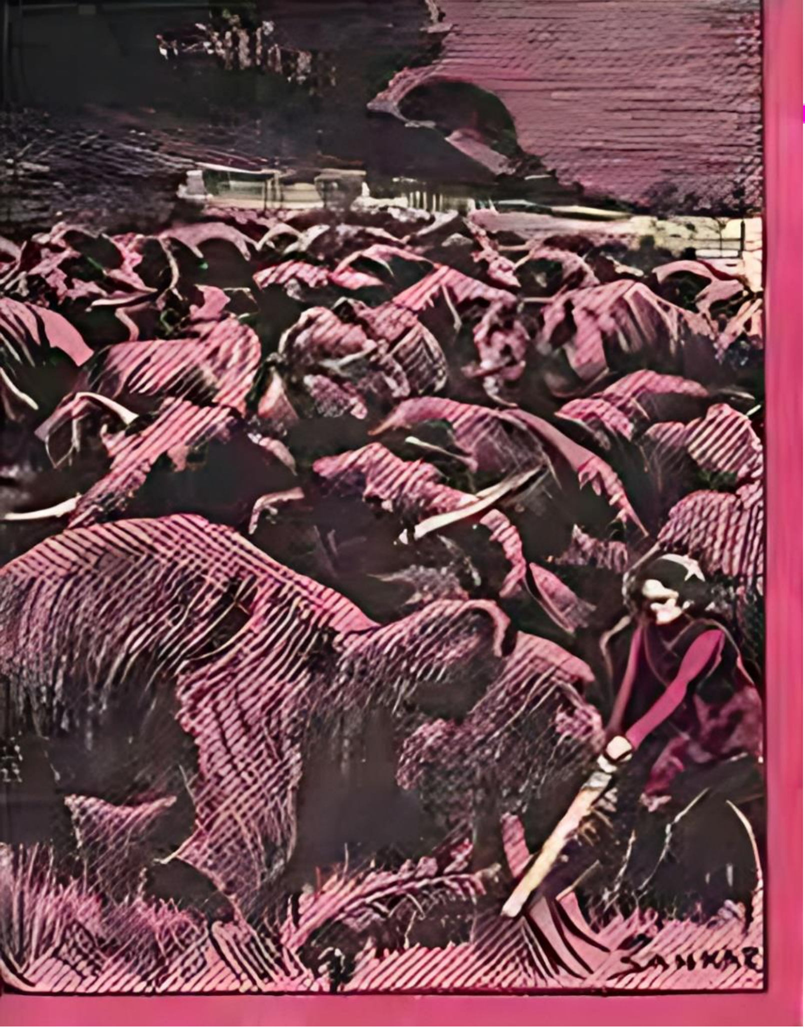

दिये। तुरन्त कौवे की सलाह के अनुसार सुदामा सौ योजनों की यात्रा कर उस झील के पास पहुँच गया और उसमें शराब मिलवा दी।

उसी रात को झील में पानी पीने हाथियों का एक बड़ा झुण्ड आया। शराब मिले पानी को पीकर हाथी नशे के कारण नीचे गिर पड़े। सुदामा ने आरे से उनके दान्तों को काटकर गाडियों पर लदवा दिया और राजा के पास वापिस चला आया। हाथी दान्त को देखकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ। सुदामा को बहुत-सा पुरस्कार देकर विदा किया।

शीघ्र ही उस मनोहर पक्षी के लिये एक सुन्दर घर तैयार होगया। विदूषक को और अधिक गुस्सा आया। उसने महराजा के पास जाकर कहा-"महाप्रभो ! हाथी दान्त के घर में रहने पर भी पक्षी सुखी नहीं है। इसी कारण वह गला खोल कर कभी गाता नहीं है।"

"तब उसके लिये क्या किया जाय ?" महाराजा ने पूछा।

"अगर उसका पहिले के मालिक न लाया गया तो वह सन्तोष से नहीं गायेगा।" विदूषक ने कहा।

"उसका मालिक कौन है यह हमें कैसे मालूम हो सकता है? उसको हम कैसे यहाँ ला सकते हैं?" महाराजा ने पूछा।

"जो इतना हाथी का दान्त ला सका है, क्या वह इस पक्षी के मालिक को ढूँढ़कर नहीं ला सकता ?" विदूषक ने कहा। महाराजा ने सुदामा को फिर अपने पास बुलवाया।

"इस पक्षी के मालिक को चालीस दिन में खोज कर लाओ। नहीं तो तेरा सिर कटवा दिया जायेगा।" राजा ने आज्ञा दी।

सुदामा के पास फिर कौवा आया।

"क्यों भाई, क्यों इतने उदास बैठे हुये हो ?" कौबे ने पूछा।

सुदामा ने अपनी आफत के बारे में कौवे से कहा।

"इसके लिये क्यों इतने उदास होते हो ?" राजा से एक नाव माँगो। उसमें विनोद-विलास की समस्त वस्तुओं को रखवाओं। उस नाव में चढ़कर यदि तुम ठीक पूर्व की ओर सौ योजन गये तो तुम्हें वह स्थल दिखाई देगा जहाँ किन्नर निवास करते हैं। वे नाव देखने आयेंगे। परन्तु किन्नर रानी के अतिरिक्त किसी और को नाव में न चढ़ने देना। उनको साथ लेकर चला आ। वे ही इस पक्षी की मालकिन हैं।" कौवे ने कहा।

कौवे के कथनानुसार सुदामा ने महाराजा से एक नाव माँगी। नाव को भली भाँति सजाया। कुछ दिनों की यात्रा के बाद, पहाड़ों के बीच किन्नरों का प्रदेश दिखाई दिया। किन्नरों ने कभी नाव न देखी थी, इसलिये नाव के आते ही उन्होने उसे चारों ओर से घेर लिया। परन्तु सुदामा ने उनको नाव के अन्दर न आने दिया।

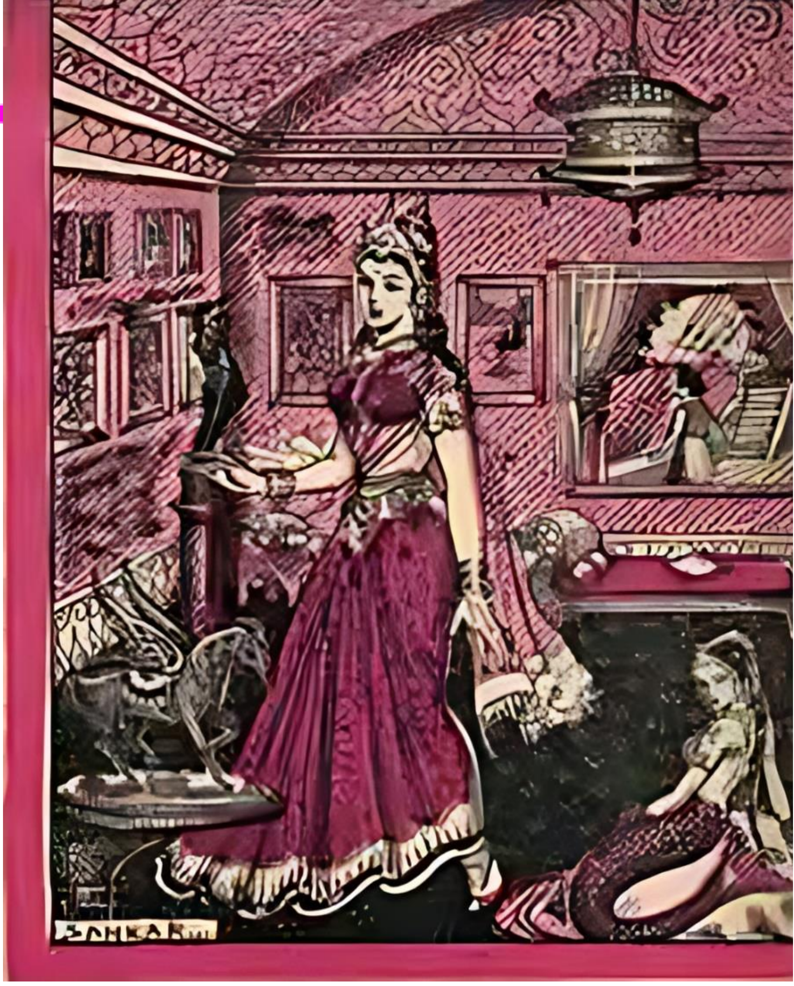

"पहले मैं तुम्हारी रानी को नाव दिखाऊँगा, बाद तुम लोगों ने देखना।" सुदामा ने उन लोगों से कहा।

किन्नरों की रानी यह बात सुन परमानन्द के साथ नाव पर चढ़ी। नाव देखते-देखते रानी को यह भी न मालूम हुआ कि समय कैसे गुजर गया। इस बीच में सुदामा ने नाव के पाल खुलवा दिये और उसकी दिशा उल्टी कर दी। किन्नर रानी का नाव का अवलोकन जब समाप्त हुआ तब नाव पाँच छह योजन दूर जा चुकी थी।

सुदामा का किन्नर रानी के साथ राज-महल के आङ्गन में पैर रखना था कि हाथी दाँत के घर में यह पक्षी गाने लगा। महाराजा उसे सुन कर परवश हो गया। किन्नर रानी को देख कर तो उसकी परवशता और भी बढ़ गई। उसने किन्नर रानी से विवाह करने का निश्चय किया। किन्नर रानी भी इसके लिये मान गई।

जोरशोर से विवाह की तैयारियाँ होने लगी। विवाह में बड़े बड़े लोग आये। सुदामा को भी निमन्त्रित किया गया।

उनका विवाह देखने के लिये, उसके कन्धे पर चढ़ कर, उसका साथी कौबा भी आया। उस कौवे को देखते ही किन्नर रानी खौल उठी और उसने कहा-"ओ पिशाची! तू यहाँ कैसे आ पहुँची ?"

"यह कोआ मेरा परम मित्र है। यदि इसके कारण आपका कोई अपकार हुआ है तो क्षमा करें।" इस तरह किन्नर रानी से प्रार्थना करते हुये कौवे ने जो उसकी सहायता की थी, सुदामा ने कह सुनाई। उस कहानी को सुन कर किन्नर रानी शान्त हुई।

"यह मेरी सहेली है। यह बहुत ही नटखट है। इसीलिये मैने इसे कौआ बना दिया था। परन्तु उसको अब भी मेरे प्रति प्रेम है। अच्छा! मैं अब इसे अपने शाप से विमुक्त करती हूँ।" किन्नर रानी ने कहा।

अगले क्षण, सुदामा के कन्धे पर बैठे कौए ने अपने पंख फड़फड़ाये, और किन्नर रूप में आकर उसके बगल में खड़ी हो गई। यह सब देख काश्मीर राजा बहुत सन्तुष्ट हुआ और अपने विवाह के सुमुहूर्त में सुदामा और शाप-विमुक्त उस किन्नर की शादी करवा दी। दुष्ट विदूषक को नौकरी से हटा दिया। सुदामा राज महल में किन्नर पत्नी के साथ सुख से रहने लगा।

गाँव के बाहर, एक इमली का पेड़ था। उस पेड़ के नीचे कूड़े फर्कट का ढेर था। उस ढेर में बीड़ की एक पेटी भी थी। उस पेटी में एक छोटे से चूहे ने अपने रहने का प्रबन्ध कर रखा था। उस पेटी में एक छेद था। छोटा चूहा उसमें से आ जा सकता था। वर्षा में या किसी शत्रु के दिखाई देने पर वह पेटी के अन्दर घुस जाता था। उस पेटी में ही थोड़ा-सा अनाज इकट्ठा कर छोटा चूहा सुख पूर्वक रहा करता था।

छोटे चूहे की और इमली के पेड़ पर रहनेवाली चिडिया की अच्छी मैत्री थी। इसलिये एक दिन छोटे चूहे का घर देखने के लिये वह नीचे आई। जैसे तैसे पेटी के छेद के पास जाकर अन्दर झाँका।

"कैसा है मेरा घर?" चूहे ने पूछा।

"यह भला क्या घर है? न खिड़की है न कुछ है! ठीक पेटी की तरह है।" चिड़िया ने कहा। "खूब कहा, ठीक पेटी की तरह क्या है? यह पेटी ही तो है। यदि खिड़की बगैरह हुयी और बिल्ली ने झाँक कर देखा तो बस मेरा काम तमाम ही समझो।" चूहे ने कहा।

"क्यों भाई ! इस छोटे से घर में भला अनाज का ढेर क्यों रख रखा है?" चिड़िया ने पूछा।

"अगर वह न हो तो फिर मेरा गुजारा कैसे? क्या दो दिन के लिये खाने पीने के लिये जमा करना भी अच्छा नहीं ?" चूहे ने कहा।

"यदि यह बात है तो यहाँ कष्ट सहने के बदले, नदी पार जाकर, उस बड़े किसान के

प्रकाश चन्द्र

खेत में पड़े अनाज के देर में क्यों नहीं रहते ?" चिड़िया ने सुझाया।

"वहाँ क्या सुख है?" मूँछे चढ़ाते हुये चूहे ने पूछा।

"सुख? वहाँ सैकडों छोटे छोटे चूहे घरवार बसाये हुये हैं। वे अनाज में ही रहते हैं। अनाज में ही घूमते फिरते हैं। मालूम है कितना बड़ा अनाज का ढेर है ?"

चूहा चिड़िया की बातों पर विश्वास न कर सका। उसने कभी कल्पना भी न की थी कि संसार में चूहों के लिये भी इतनी भोग विकास की चीजें हो सकती है। "बहिन ! यदि तेरा कहना ठीक है तो इसी क्षण वहाँ जाने की इच्छा हो रही है।" चूहे ने कहा।

"इसमें हानि ही क्या है? एक बार देख आयो भाई! अगर मेरे कहने में कुछ गल्ती हो तो मुझ से पूछना।" कहती कहती चिड़िया झट उड़ टहनी पर जा बैठी।

उसी दिन सायंकाल चूहा नदी की तरफ चल पड़ा । जाते-जाते उसको नदी का कल-कल शब्द सुनाई दिया। थका-माँदा चूहा जल्दी-जल्दी नदी के पास पहुँचा। किनारे के पानी में पड़े एक पत्थर पर दौड़ कर जा चढ़ा, पेट भर पानी पिया, सिर उठा कर जब वह मुँछे सँवार रहा था तो उसे भयङ्कर शब्द सुनाई दिया। जब चूहे ने इधर-उधर देखा तो पानी के साथ बहते हुए कमल के बड़े पत्ते पर एक मेण्ढक दिखाई दिया। देखते देखते ही पत्ता भँवर की तरफ फिरा और पासवाले पत्थर पर चढ़ गया। इस कारण मेंढक की यात्रा वहीं खतम हो गई।

"भाई ! जरा पाँव से पत्ते को पानी में ढकेल दो।" मेण्ढक ने मोटे गले से टें टें करते हुये कहा।

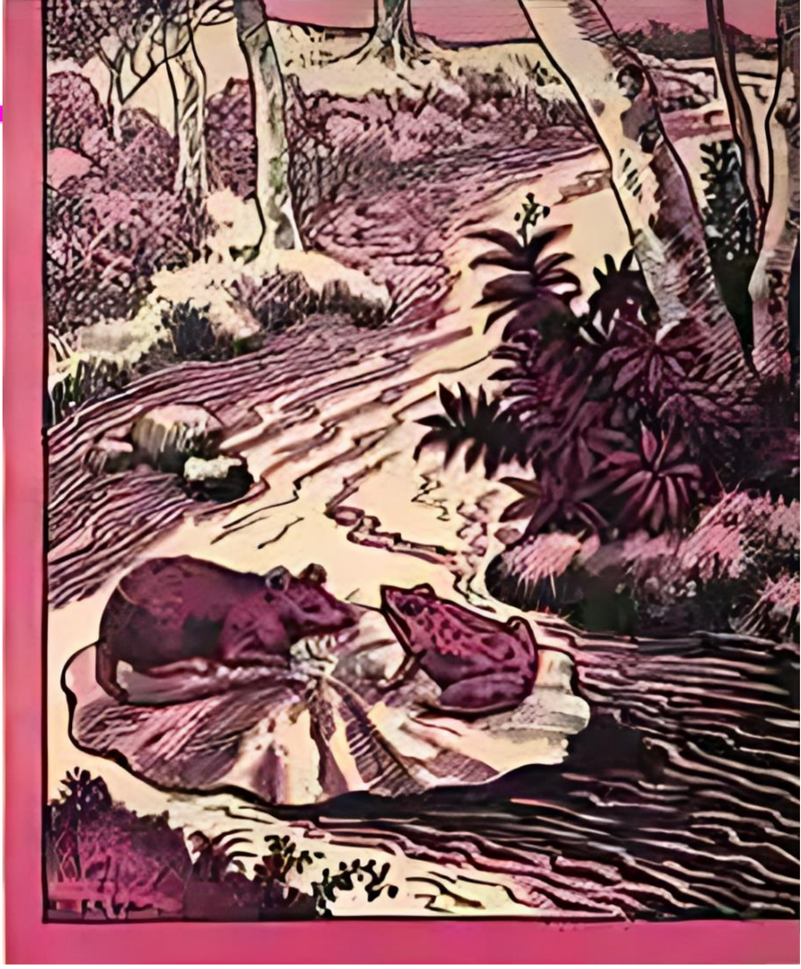

"इसमें क्या रखा है। बड़े किसान का खेत कहाँ है ? जरा बता पाईयेगा ?" चूहे ने पूछा।

"नीचे के और ही है, आओ तुम भी पत्ते पर बैठो, दोनों मिल कर चलें।" मेण्ढक ने कहा।

तब चूहा कूद कर मेण्ढक के बगल में जा बैठा, पैर से पत्थर को धकेला। पत्ता फिर पानी में बहने लगा।

"जरा एक मिनट ठहरना ! उस पत्थर पर एक मक्खी है।" कहता-कहता मेण्ढक किनारे पर पड़े पत्थर पर कूदा और एक क्षण में फिर पत्ते पर वापिस आ कूदा। चूहा पानी में गिरते-गिरते बचा।

"बिना कहे सुने आपका इस तरह कूदना अच्छा नहीं लगता। कुछ और देर होती तो मैं पानी में गिर गया होता।" चूहे ने कहा।"

मेण्ढक ने हँस कर कहा-"पानी ही तो है। तैर जाना।"

"बाह, आपने खूब कही। मुझे तैरना नहीं आता है।"

मेण्ढक कुछ कहने वाला ही था कि किनारे पर कोई और कीड़ा दिखाई दिया। एक ही छलाँग में मेण्ढक किनारे पर जा कूदा। इस बार चूहा सचमुच पानी में गिर पड़ा।

फिर एक तरङ्ग ने उसको किनारे की तरफ धकेल दिया। मौत से तो बचा, पर चूहा ठण्ड के मारे जम-सा गया था।

"अगर तैरना नहीं जाता था तो भला तैरे ही क्यों ?" किसी की यह बात चूहे को सुनाई दी। सिर ऊँचा कर देखने पर ज्ञात हुआ कि आम के पेड़ के नीचे एक गिलहरी बैठी हुई थी।

"क्यों मामा ! क्या मैं कभी अपने आप तैर सकूँगा ?। यह सब उस दुष्ट

मेण्ढक की करतूत है।" यह कह चूहे ने छींका।

"जैसे तैसे शरीर को तो सुखा लिया होता। नहीं तो जुकाम हो जायगा। ठहरो, कुछ दिन पहले आँधी एक कपड़ा उड़ा लायी थी, वह खोल में होना ही चाहिये। लाये देता हूँ।" कहती कहती गिलहरी पेड़ पर चढ़कर कपड़े का टुकड़ा ले अयी।

चूहे ने उसको शरीर पर ढक लिया, और बिना हिले डुले एक जगह गर्मी के लिये बैठ गया। यह तमाशा क्या है; यह देखने के लिये गिलहरी के बच्चे भी बाहर निकल आये।

इस बीच में आकाश से 'कृष्ण' का शब्द जोर से हुआ।

"वह देखो गरुड़ है, जो चोर जहाँ हैं वहीं रहे, बिल्कुल चुपचाप।" पेड़ पर बैठे रखवाली करते हुये कौए ने कहा।

"अरे बाप रे बाप! यमराज आ रहा है। 'कृष्ण' कहते ही स्वहा कर जाता है। तुम खोल में क्यों नहीं जाते हो? तुम बिल्कुल न हिलो। ऊपर भगवान हैं ही!" कहकर गिलहरी जल्दी जल्दी अपने बच्चों के साथ खोल में चली गई।

आकाश में गरुड़ ने दो चक्कर मारे। खाने के लिये कुछ न दिखाई दिया। आम के पेड़ के नीचे कपड़े का टुकड़ा तो दिखाई दिया, पर उसे यह न मालूम हुआ कि उसके अन्दर उसका आहार है। वह दूसरी जगह चला गया।

चूहे का बदन अब सूख गया था। वह कपड़े में से बाहर निकलकर आ गया। खोल में से गिलहरी और उसके बच्चे भी बाहर निकल आये।

"तुम्हारी कृपा से आज मेरा शरीर सूख गया है और प्राण भी बच गये हैं। अगर यह कपड़ा न होता तो न जाने मेरी गति क्या

हुई होती। कृपा करके बड़े किसान का खेत का रास्ता बता पाईयेगा ?" चूहे ने पूछा। "बड़े किसान का खेत, वह जौ का खेत दिखाई दे रहा है न, उसकी बगल में ही है।" कौबे ने कहा।

चूहा सबसे विदा लेकर जौ के खेत की तरफ चला।

जौ का खेत सामने दिखाई तो दे रहा था परन्तु बहुत चलने के बाद ही वह खेत मिला। वह खेत की मेंढ़ पर चलता गया, परन्तु फासला कम न हुआ। चूहे को न मालूम था कि इतना बड़ा भी कोई खेत होता है। जैसे तैसे खेत के खतम होते ही धान के खेत में एक बहुत बड़ा धान का ढेर दिखाई दिया। इतना बड़ा ढेर ! इसमें तो कितने ही चूहे रह सकते हैं। आनन्दित हो, वह चूहा उस ढेर के पास जाने लगा। वह सारा का सारा ढ़ेर सचमुच धान का नहीं था। उसमें कूड़ा कर्कट, भुसा वगैरह भी था। कहीं कहीं धान के दाने पड़े हुये थे। पास में ही बड़े किसान की अनाज की कोठियाँ थीं। उन कोठियों को चूहों के उत्पात से

बचाने के लिये ही उसने वह ढेर खेत में छोड़ दिया था। उस ढेर के पास जाकर चूहा यकायक रुक गया। वहाँ धान के दानों को चुगता हुआ एक बड़ा चूहा, छोटे चूहे को दिखाई दिया।

"जरूरत हो तो खाते क्यों नहीं हो? दाने इकट्ठे काहे को कर रहे हो भाई ?" छोटे चूहे ने पूछा।

"हूँ, तू यहाँ नया आया लगता है ? तो यह आहार लाना तेरा काम ठहरा। सत्रह व्यक्तियों को खाना चाहिये। जल्दी लाओ ॐ, समझे ? बड़ा चूहा जल्दी करने लगा।

छोटे चूहे को बहुत आश्चर्य हुआ। "जिनको आहार की आवश्यकता है क्या वे यहाँ आकर नहीं खा सकते हैं? एक का आहार भला दूसरा ढोकर क्यों लाये? यह बात तो मैंने कहीं भी नहीं सुनी है।" छोटे चूहे ने कहा।

"बकवास मत कर। यहाँ का रिवाज ही ऐसा है। जो नये आते हैं उन्हें पुरानों के लिये काम करना पड़ता है। सोचा होगा कि आसानी से मिला है; खा आयें। हमारी नौकरी करो, तभी तुम्हें भोजन मिलेगा। नहीं तो एक दाना भी छू नहीं सकते।" चूहे ने धमकाया।

छोटे चूहे को यह पसन्द न आया। वह जाने के लिये तैयार हो गया। परन्तु दूसरे चूहे ने उसका हाथ पकड़ लिया। दोनों झगड़ने लगे। इतने में वहाँ एक कबूतर उड़ता उड़ता आ गया। "ठहरो! लड़ते क्यों हो?" उसने कहा।

दोनों का किस्सा सुनकर कबूतर ने चूहे से पूछा-"तुम घर छोड़ कर क्यों आये ?"

"यहाँ एक अद्भुत धान का ढेर है, चिड़िया के कहने पर मैं चला आया।" चूहे ने कहा।

"अरे पागल, उस चिड़िया की बात सुनकर चला आया। यह सब खराब धान है। तू मेहनत कर जो धान लाता है, भला उसके सामने यह क्या चीज़ है ? एकदम भुस ही तो है । इसके लिये क्या यहाँ उसकी नौकरी करेगा? मैं तुम्हारी जगह की ओर जा रहा हूँ। यदि चाहते हो तो मेरी पीठ पर बैठ जाओ, ले जाऊँगा।" कबूतर ने कहा।

छोटा चूहा अपने घर वापिस आ गया। उसे अनुभव से पता लग गया था कि दूर के पहाड़ सुन्दर दिखाई देते है, अपने घर जैसी दुनिया में कोई चीज नहीं है। परिश्रम करने से ही सुख मिलता है, यह सोचकर चूहा अपने घर में आराम से रहने लगा।

इंदौर राज्य का परिपालन जब रानी अहल्याबाई किया करती थी। तब विनायक राव गन्धेकर नामक एक प्रसिद्ध सङ्गीतज्ञ रहा करता था। वह बहुत बड़ा कवि था। भक्त भी था। वह स्वयं गीत बनाता, उनके लिये स्वर निकालता और उन्हें गाकर लोगों को सुनाता।

कवि और गायक के रूप में गन्धेकर की कीर्ति सर्वत्र फैल गई। भक्त, सङ्गीत पोषक, धनिक आदि, सदा उसके घर आ उसको अनेकों उपहार दिया करते थे।

इस प्रकार प्राप्त धन को, गन्धेकर गरीब लोगों में वितरित कर दिया करता था। जितना भी धन आता वह इस तरह खर्च हो जाता। किन्तु जितना धन वह खर्च करता, उपहारों के रूप में उसे उतना मिल भी जाता।

सन्तान की कमी के अतिरिक्त गन्धेकर के जीवन में कोई कमी न थी। आखिर वह निस्सन्तान ही अपने पूज्य देव पाण्डुरङ्ग में अन्तहीन हो गया। अन्तिम क्षणों में उसने पत्नी रुक्माबाई को बुलाकर कहा-"रुक्मा ! हमें सन्तान नहीं है। परन्तु मनुष्य के लिये केवल पुत्र ही सन्तान नहीं है। सात सन्तानों में मैं यही एक सन्तान प्राप्त न कर सका। अतः मेरी मृत्यु के अनन्तर मेरे धन से तालाब, कुँए , मन्दिर, धर्मशाला आदि बनवाओ। यही मेरी इच्छा है।"

पति के मृत्यु के बाद रुक्माबाई ने उसकी इच्छा को पूरा करने का निश्चय किया; परन्तु एक बाधा आ पड़ी। एक दिन इन्दौर राज्य के सेनाधिपति-तुकाजी ने आकर कहा, क्योंकि गन्धेकर की कोई सन्तान नहीं है, इस कारण उसकी सम्पूर्ण सम्पत्ति विधान

यशवन्तराव

के अनुसार राज्य की है। इसलिये उसका सारा धन रानी को सौंप दिया जाय। रुक्माबाई अपने जीवन निर्वाह के लिये उसमें से थोड़ा-बहुत रख सकती है।

रुक्माबाई ने अपने पति की आखिरी इच्छा के बारे में सेनापति से कहा। परन्तु जब राज्य का विधान वैसा ही हो तो तुकाजी क्या कर सकता था? सारी सम्पति को उसने राज्य कोश में जमाकर दी।

रुक्माबाई ने अहिल्याबाई के सम्मुख एक निवेदन पत्र समर्पित किया। रानी के महल में जाकर कहा कि यदि उसके पति की सम्पत्ति उसे दे दी जाय तो वह पति की इच्छानुसार, तालाब कुँये, और मन्दिर वगैरह बनवायेगी।

रुक्माबाई का निवेदन सुन, रानी अहल्या बाई ने तुकाजी को आज्ञा दी कि गन्धेकर की सम्पत्ति को वापिस दे दिया जाय।

तुकाजी ने चकित होकर कहा- "देवी! यह विधान के विरुद्ध है।"

"इस धन से हम क्या करेंगे ?" रानी ने तुकाजी से पूछा।

"तालाब, कुएँ आदि, खुदवाने में, और धर्मशाला वगैरह प्रजापयोगी चीज़ों के लिये इसका उपयोग होगा।" तुकाजी ने कहा।

"हाँ तो, रुक्माबाई भी इन्हीं चीजों के लिये यह धन खर्चना चाहती है। भेद इतना ही है कि राज्य के कर्मचारी अपने वेतन के लिये काम करते हैं, परन्तु यह पति भक्ति के कारण, ये काम स्वयं करना चाहती है। इस में से एक कोढ़ी भी वेतन के रूप में नहीं लेगी। अतः यह धन इसको इसी क्षण वापिस कर दिया जाय।" रानी अहल्याबाई ने तुकाजी को आज्ञा दी। इन्दौर राज्य की प्रजा ने रानी के न्याय पर सन्तोष प्रकट किया।

पाँच सौ साल पहिले रीवाँ नगर के समीप जलालपुर नाम का गाँव था। उस गाँव में एक बहुत ही गरीब कुम्हार रहा करता था। जब से उसने होश सम्भाली थी, तब से वह वही काम करता आया था, परन्तु वह कुछ जमा न कर पाया था।

कुम्हार जब कभी अपनी गरीबी के बारे में सोचता तो बहुत दुःखी होता। वह सोचता रहता कि बुढ़ापे में जब वह कुछ काम न कर सकेगा, तो उसकी क्या हालत होगी ?

एक दिन वह किसी काम पर रीवाँ गया। कन्धे पर रोटी की पोटली, हाथ में एक टेढ़ा मेढ़ा डण्डा लिये, वह रीवा के पासवाले एक पुल को पार कर रहा था।

उसी समय, कुम्हार को पुल के उस तरफ से आता हुआ एक पण्डित दिखाई दिया।कुम्हार के हाथ में टेढ़ा मेढ़ा डण्डा देखकर पण्डित के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। परन्तु आश्चर्य को छुपाते हुये.....

"तुम्हारा गाँव कौन-सा है?" उसने मुस्कराते हुये पूछा। तब कुम्हार ने जवाब दिया "जलालपुर"।

कुछ देर सोच विचार कर कुम्हार के हाथ से वह टेढ़ा मेढ़ा डण्डा माँगकर पण्डित उसकी जाँच करने लगा। कुम्हार को उसका यह वर्ताव देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। दस पन्द्रह साल से वह जिस डण्डे को लेकर घूमता फिरता आया है, उसे यह पढ़ा लिखा व्यक्ति क्यों इतने आश्चर्य से देख रहा है, यह कुम्हार न समझ सका।

पण्डित ने कुम्हार को डण्डा वापिस देते हुये कहा -"वृढे। मुझे नहीं मालूम तुम किस

जयप्रकाश

प्रकार के आदमी हो। फिर भी मैं विश्वास कर एक ऐसा रहस्य बताता हूँ, जिससे हम दोनों का कल्याण होगा। सुनो, अगर जैसा मैने कहा वैसा तुम करोगे तो हम दोनों लखपति हो जायेंगे।"

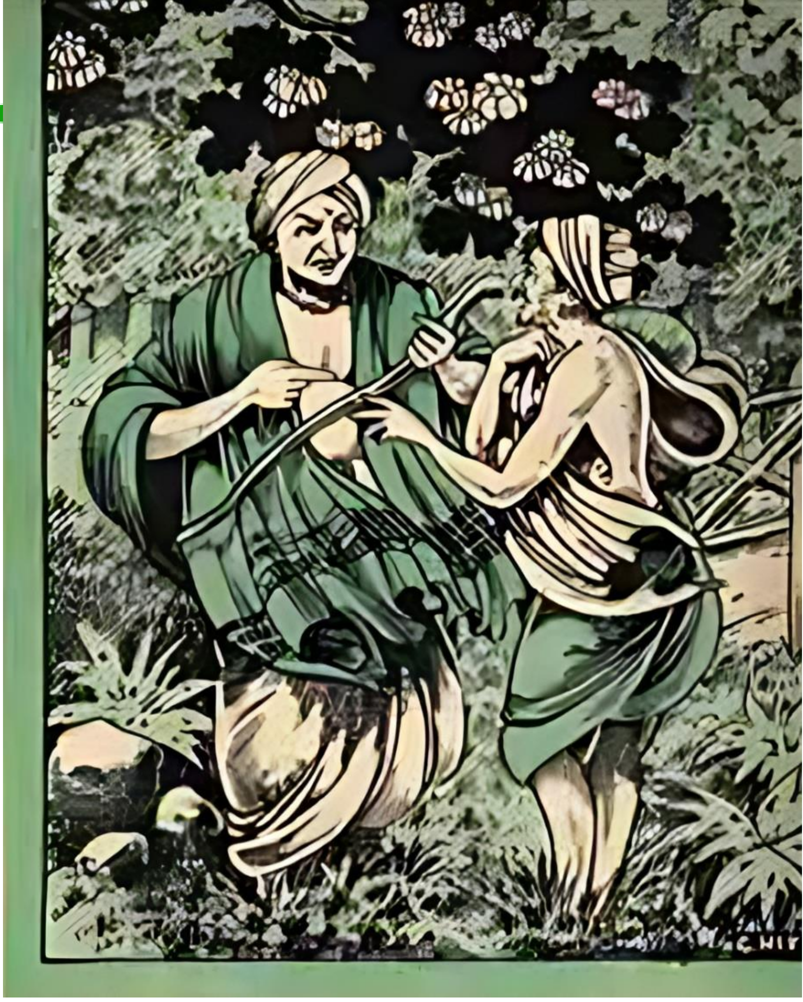

कुमार को पण्डित की ये बातें समझ में नहीं आई। वह सोचने लगा उसके सफेद टेढ़े-मेढे डण्डे में भला लाखों की की कीमत का क्या महात्म्य हो सकता है।

"आप जो कह रहे हैं मुझे समझ में नहीं आ रहा है। यह हमारे गाँव के पास नदी किनारे के जामुन के पेड़ की लकड़ी है। अगर आप एक आना दें तो हमारे गाँव का कोई भी लड़का आपको एक अच्छी सी डण्डी तोड़कर दे देगा।" कुम्हार ने कहा।

तब पण्डित कुम्हार के कन्धे पर हाथ रखकर, कहने लगा।

"में रीवाँ के एक विद्यालय में अध्यापक हूँ। इस डण्डे को तूने किस पेड़ से काटा है, उसका तेरा याद रखना हमारे लिये सौभाग्य की बात ही समझनी चाहिये। सफेद जामुन का पेड़ इस इलाके में नहीं मिलता है। जब तुमने कहा कि वह पेड़ नदी के किनारे है, तब मुझे सारा रहस्य मालूम हो गया। उस पेड़ की जड़ में अक्रमखान का खजाना दबा पड़ा है। हम चुप चाप वह धन खोदकर अपने घर लेजा सकते हैं।"

'अक्रमखान का खजाना' की बात कहते ही कुम्हार को अपनी छुटपन की बातें याद आगई। अक्रमखान उस ईलाके में, सौ वर्ष पहिले एक मशहूर डाकू था। उस जमाने की अराजकता में, वह गावों में दिन दहाड़े ड़ाका मारता था, और उसने अपना सारा का सारा धन कहीं रख छोड़ा था, लोगों में यह विश्वास प्रचलित था।

खोदने लगा। करीब करीब एक गज खोदने पर उन्हें एक बड़ी चट्टान दिखाई दी। दोनों ने सारा बल लगाकर उसको एक तरफ रख दिया।

उस चट्टान के नीचे उन्हें एक बड़ी सुरङ्ग दिखाई दी। मशाल जलाकर दोनों कुछ दूर उस सुरङ्ग में गये। एक जगह एक बड़ा घण्टा लटकता हुआ दिखाई दिया और उसके आस पास सोने के गहने, मोती, जवाहरात वगैरह बिखरे पड़े थे।

यह सब याद आने पर कुम्हार ने सोचा शायद पण्डित का कहा हुआ सच हो सकता है। इस तरह शायद गरीबी खतम हो जाय और मैं भाग्यवान हो सकता हूँ, कुम्हार में आशा पैदा हुई।

तब क्या था, कुम्हार पण्डित को सफेद जामुन का पेड़ दिखाने के लिये मान गया। दोनों साँझ होते होते जलालपुर के पास वाले नदी के पास जा पहुँचे। उस नदी के किनारे सफेद जामुन का पेड़ दिखाई दिया। खूब अन्धेरा होने तक यहाँ ठहर कर कुम्हार घर जाकर फावडा आदि ले आया, और पेड़ के जड़ के पास

उतना धन दिखाई देने पर कुम्हार को बेहद लालच हुआ। वह साथ लाये हुये बोरे में, सोना, चान्दी, गहने आदि, जल्दी-जल्दी भरने लगा। जल्दबाजी में उसका सिर घण्टे पर जा लगा, टन् शब्द हुआ। तुरन्त दीवार के पास से कोई भयङ्कर सूरत वाला व्यक्ति आँखें मलता हुआ गरजा 'यह रात है कि दिन'?

"अब तो ठीक दुपहरी है। अभी रात्री नहीं हुई।" पण्डित ने जवाब दिया। दूसरे क्षण वह भयङ्कर व्यक्ति फिर सो गया। कुम्हार बुरी तरह घबरा गया। तब तक

उसे न मालूम था, कि उस धनराशी की रखवाली करनेवाला भी एक था।

"यह कौन है? वे अङ्गारे होती हुई आँखें, हाथ में गण्डासा देख मुझे डर लग रहा है।" कुम्हार ने कहा। यह सुन पण्डित ने कहा-

"तुम घबराओ मत। बस, उस घण्टे को बिना छुए, जो कुछ तूने बटोरना है, बटोर कर अपने बोरे में डाल ले। अगर कभी उस घण्टे से तेरा सिर टकरा भी जाय, तो मैने जो जवाब दिया है वह दे देना।"

आधे घण्टे में बिना किसी खतरे के उन्होने अपने बोरे धन से भर लिये। और सुरङ्ग से बाहर चले आये। पेड़ की जड़ में, चट्टान को यथापूर्व रख दिया। पण्डित रीवा चला गया और कुम्हार अपने घर वापिस आ गया।

चार पाँच महीने गुजर गये। कुम्हार ने उस धन से अपने लिये एक बड़ा घर बनवा लिया। नौकर चाकरों को भी रख लिया। वह हर तरह भोग विलास का आनन्द उठा रहा था। परन्तु उसको तृप्ति न थी। "चाहे कितना भी धन हो, क्या फायदा ! महाराज के धन की तुलना में भला मेरा धन कितना है ? उसके जितने अधिकार मेरे पास कहाँ है?" वह सोचने लगा।

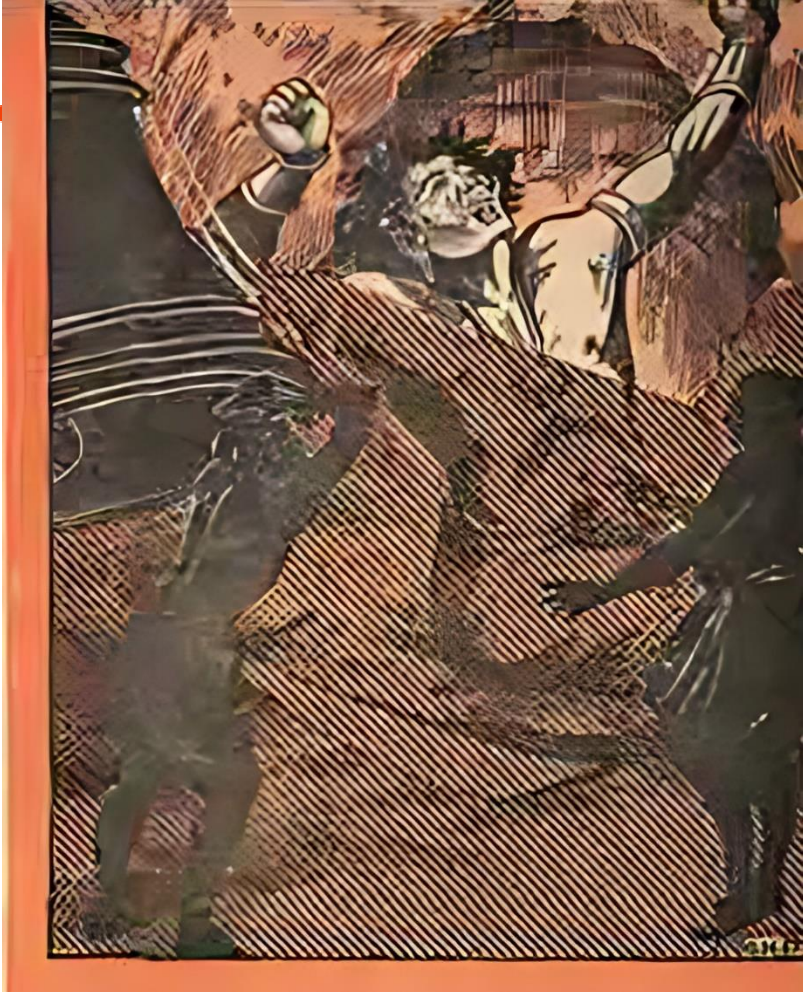

कुम्हार में धीरे धीरे लालच ज्यादा हो गया। उसने अक्रमखान के बचे खुचे खजाने को भी अपने घर लाना चाहा। एक रात फावडा और बोरे लेकर सुरङ्ग में गया।

उसकी छाती डर के मारे धक धक कर रही थी। मगर लालच के कारण वह सुरङ्ग के अन्दर चलता गया। आखिर वहाँ पहुँचा जहाँ धन राशी रखी हुई थी।

धनराशी ठीक वैसी कि वैसी थी, जैसा वह उसे छोड़ गया था। "अच्छा हुआ वह

रीवाँ वाला सब कुछ उठा नहीं ले गया।" उसने सोचा। बोरे में फिर जवाहरात भरने लगा। उस जल्दी में कुम्हार घण्टे की बात भूल गया। घण्टा उसके सिर पर लगा। ठन का शब्द हुआ।

घण्टा बजते ही कुम्हार को ऐसा लगा जैसे उसका दिल थम सा गया हो। उसने बोरा लेकर बाहर भागना चाहा। वह बोरे को उठाकर भागने को ही था कि इस बीच में.....

हाथ में छुरी लिये, दीवार की बगल में सोता हुआ भयङ्कर आकार के व्यक्ति ने गरजकर पूछा-"यह रात है या दिन ?" कुम्हार के होश उड़ गये। उसने घबराते हुये कहा-"यह रात है।" उसका यह कहना था कि उस भयङ्कर व्यक्ति ने आगे बढ़कर कुम्हार को धर दबोचा। कुम्हार ने अपने को छुड़ाने की बहुत कोशिश की, पर वह उस भयङ्कर व्यक्ति की पकड़ को ढीला न कर सका। वह विवश हो उस भयङ्कर व्यक्ति के सामने डरता डरता खड़ा हो गया। तब उस व्यक्ति ने कहा-

"पाजी, अक्रमखान की लूट को लूट रहा है। चालीस साल से मैं इसकी रखवाली कर रहा हूँ। मैं सोच रहा था कि मेरे बाद इसकी रखवाली कौन करेगा। आज तू अच्छा मिला।" उसने कुम्हार के हाथों में जञ्जीरें लगा दी और जञ्जीर को दीवार में लगी एक बड़ी कील से बाँध दिया।

तब से अक्रमखान के खजाने की रखवाली कुम्हार को करनी पड़ी। "लालच के कारण ही तो यह बुरी हालत हुई है" यह सोचकर कुम्हार दुःखी होता। यद्यपि चारों ओर अमित धन था, परन्तु उसके उपयोग करने की योग्यता वह खो चुका था।

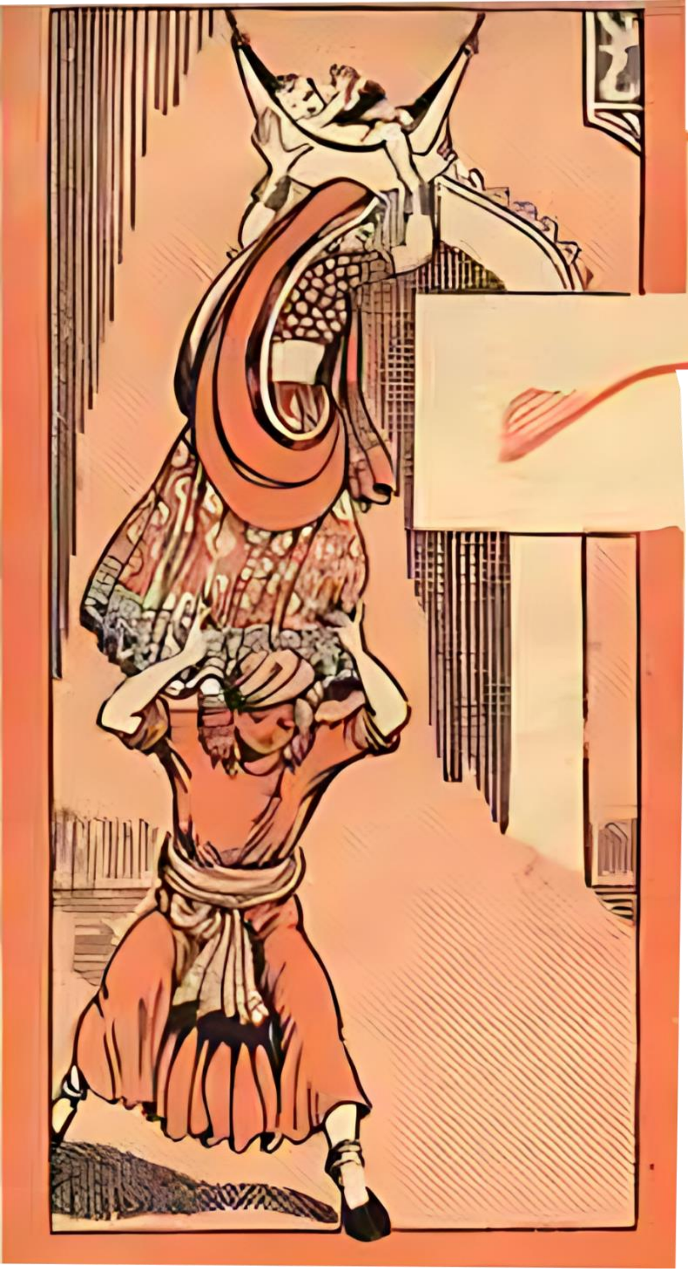

भय का मतलब ?

एक जङ्गल में, झील के किनारे, एक छोटे-से घर में कोई गरीब स्त्री रहा करती थी। उसका एक इकलौता लड़का था। उसका नाम था सुमन्त। छुटपन से ही उसकी माँ ने उसको बड़े लाड़ प्यार से पाला पोसा था। एक दिन, सुमन्त और उसकी माँ रात मैं अपने छोटे से घर में मजे से सो रहे थे।

यकायक तेज हवा शुरु हुयी, देखते देखते वह आन्धी में बदली, फिर ओला पानी बरसने लगा। आन्धी का शोर सुन माँ उठ बैठी। लड़के को उठाकर कहा-"बेटा! मुझे भय लग रहा है। उस खिड़की को जरा बन्द करना।"

सुमन्त जाग गया। उसने माँ की बात भी सुन ली। 'भय' शब्द उसने अपने जीवन में तब पहली पहली बार सुना था। इस लिये उसने कहा-"खिड़की बन्द किये देता हूँ, माँ ! तू 'भय' क्या कह रही है ? भय क्या चीज होती है ?"

उस प्रश्न का माँ ने जवाब नहीं दिया। "भला इस छोटे से बच्चे को यह सब बतलाने की क्या जरूरत है ?" यह सोच कर वह फिर ऊँघने लगी।

तब सुमन्त में यह जानने का कुतूहल पैदा हुआ कि आखिर 'भय' क्या चीज है। वह धीमे से किवाड़ खोल बाहर चला गया। उस धने अन्धकार में, आन्धी में वह

यह चिल्लाता हुआ जङ्गल में फिरने लगा-" भय। तू क्या है ? तू कहाँ रहता है?"

"बेटा! तुम आ गये ? मैं इतनी देर इस प्रतीक्षा में बैठी हुई थी कि कौन आता है। अगर तुमने मुझे अपने कन्धों पर थोड़ी देर खड़े रहने दिया तो मैं झूले में से अपने लड़के को उतार लूँगी।" यह जयाब सुनाई दिया।

सुमन्त यह सुन वहाँ गया। वहाँ एक घर में एक स्त्री खड़ी हुई थी। और छत पर से एक झूला लटक रहा था।

सच कहा जाय तो वह मनुष्य स्त्री नहीं थी। वह एक राक्षसी थी। चूँकि यह बात सुमन्त को नहीं मालूम थी, उसने उसे अपने कन्धों पर चढ़ा लिया। राक्षसी ने सुमन्त को अपने पैरों से रौन्दने का प्रयत्न किया। इस पर सुमन्त को गुस्सा आगया और उसने अपने हाथ उठा कर उसे नीचे गिरा दिया।

वह राक्षसी मुँह के बल नीचे गिरी। गिरते ही उसके आगे के दो दान्त टूट गये। चीखती चिल्लाती वह वहाँ से भाग गई।

सुमन्त उस घर से बाहर आया। आन्धी वर्षा समाप्त हो चुकी थी। फिर वह कुछ दूर आगे चला।

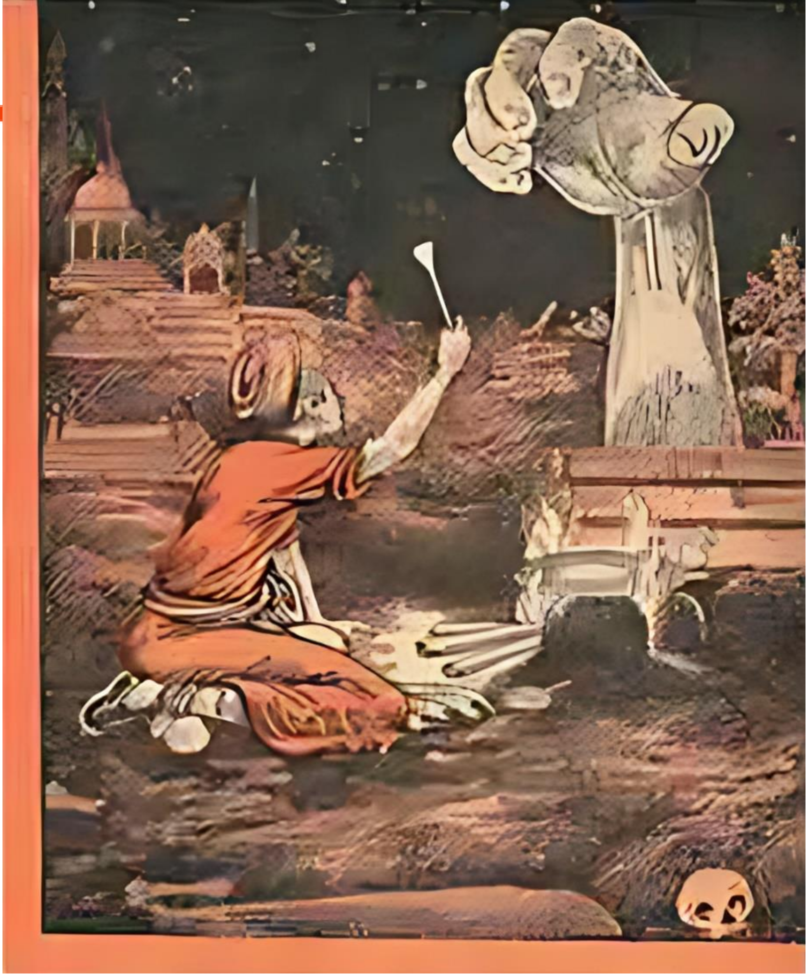

एक जगह उसको कई चोर दिखाई दिये। सुमन्त को देखकर उन लोगों ने कहा-

"तू कौन है ? यहाँ तो चिड़िया भी उड़ते हरती है। राजा की सेनायें भी आने को हिचकती हैं। और तू बिना किसी डर के क्यों चला आ रहा है ?"

"वह भय क्या है, कैसा होता है, यही देखने के लिये तो चला आ रहा हूँ।" सुमन्त ने कहा।

यह जवाब सुन चोरों को हँसी आ गई। उन्होंने सुमन्त के हाथ में एक तवा, चिमटा

और आटा दिया और कहा-"जाओ, उस श्मशान में जाकर इस आटे से एक रोटी तो बना लो। तब मालूम हो जायगा कि भय क्या चीज होती है।"

सुमन्त मान गया और श्मशान में जाकर चूल्हा जलाकर तवे पर रोटी चढ़ाने लगा। पास के एक समाधि में से एक बड़े हाथ ने बाहर आकर कहा-

"क्यों भाई ! जरा मुझे रोटी का स्वाद न चखाओगे ?"

सुमन्त जल्दी में था। उसकी यह बात सुन वह खिझ उठा।

"रोटी का स्वाद चखोगे ? जिन्दों की भूख मिटाने से पहले ले तेरी ही भूख मिटाता हूँ।" कहते हुये उसने चिमटे से एक चेट मारी। उस चोट से वह हाथ समाधि में फिर लुप्त हो गया।

बाद में रोटी बनाकर, सुमन्त ने जो गुजरा था चोरों से कह दिया। चोर सुमन्त की निर्भयता को देख कर चकित हो गये।

"बाबू, तुझे भय का मतलब समझाना हमारे बस की बात नहीं है। तेरा भला होगा, तू यहाँ से जल्दी चला जा। हमें ऐसे ही रहने दे।" वे सुमन्त को मनाने लगे। सुमन्त के वहाँ से कुछ दूर जाने पर उसे एक बूढ़ी दिखाई दी। "क्यों बेटा ! इस जङ्गल में क्यों इधर उधर फिर रहे हो? तुम्हारा कौन-सा गाँव है ? क्या काम करते हो ?" उसने प्रश्न पूछे।

सुमन्त ने कहा-"नानी, मेरी अभी यह देखने की इच्छा पूरी नहीं हुयी है कि भय क्या चीज़ है।" इस पर बुढ़िया ने हँसते हुये कहा-

"तुम जैसी ही मेरी पोती है। आओ बेटा, तेरी इच्छा वह पूर्ण कर देगी।" वह बुढ़िया सुमन्त को साथ ले गई।

बुढ़िया की पोती बहुत ही चालाक थी। सुमन्त की बात सुनकर उसको एक चाल सूझी। भोजन का समय होने पर सुमन्त को भोजन परोसकर, वह कुछ दूर खड़ी हो गई। सब कुछ मिल मिलाकर सुमन्त मुख में कौर रखने को ही था-

"ठहरो, ठहरो, जिस वर्तन में शाक बनाया था वह तो रखना ही भूल गई।" कहती कहती वह रसोई में भागी भागी गई, और एक बड़े बर्तन को लाकर उसके सामने रख दिया।

सुमन्त ने शाक लेने के लिये वर्तन का ढकना खोला। तुरन्त उसको उसमें से टप टप शब्द सुनाई दिया।

'अरे' उसके मुख से निकला और सुमन्त डर के मारे पीछे हट गया। बर्तन में बन्द, एक चिड़िया ढकना खोलते ही फर फर करती उड़ गई। वह सुमन्त जिसे भय क्या चीज होती है न मालूम था, चिड़िया को देख कर डर गया। बुढ़िया और पोती ठठा मारकर हँसने लगे, और पूछा-"अब तो मालूम हुआ? पता लगा भय क्या चीज़ होती है ?"

सुमन्त ने कहा-"हाँ, अब पता लगा कि भय क्या चीज़ होती है। अब मैं अपनी माँ के पास चला जाऊँगा। यदि तुम दोनों भी मेरे साथ आये तो मेरी माँ बहुत प्रसन्न होगी।"

चूँकि उनके घर में कोई मर्द न था, बुढ़िया और उसकी पोती भी उसके साथ जाने के लिये राजी हो गई और वे उसके घर गये। सुमन्त की माँ को बहुत आनन्द हुआ। सब मिल-जुल कर रहने लगे। सुमन्त भी खूब मेहनत करके काम करने लगा।

कुछ दिनों बाद, सुमन्त की और बुढ़िया की चालाक पोती का विवाह भी हुआ।

CHANDAMAMA (Hindi) OCTOBER 1984 Regd. No. M. 3452

रङ्गीन चित्र-कथा, चित्र — ५